INTERNATIONAL MAGAZINE
RNI NO. 64884/96

30/-

March 2018

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीअै एकु एकु वखाणीअै ।।
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीअै ।।

आत्म मार्ग

बुलन्दावस्था का प्रतीक होला महल्ला (श्री अनंदपुर साहिब)

आत्म मार्ग

वर्ष तेइसवां - अंक दूसरा, मार्च 2018

गुरद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

संचालक

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज (ब्रह्मलीन)
तथा संत माता (बीजी) रणजीत कौर जी (ब्रह्मलीन)

चेयरमैन
सन्त बाबा लखबीर सिंह जी

एडिटर-इन-चीफ
सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

प्रबन्ध सम्पादक
भाई (डा.) सुखविंदर सिंह

मुख्य सम्पादक
डा. जगजीत सिंह (97798 16909)

मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृप्या निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यलय समय प्रात: 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - **84378-12900, 94172-14391, 94172-14379**

Email : atammarg1@yahoo.co.in

Postal Address for any Enquiry, Money Order's :

'ATAM MARG' MAGAJINE
Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib (New Chandigarh) P.O. Mullanpur Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S. Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India

SUBSCRIPTION - शुल्क (देश)

वार्षिक	आजीवन सदस्यता	प्रति कापी
300/-	3000/-	30/-
320/-	3020/-	(For outstation cheques)

SUBSCRIPTION FOREIGN (विदेश)

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Canada	80 Can $	800 Can $
Australia	80 Aus $	800 Aus $

प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटर्ज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज़-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपुर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर (मोहाली), पंजाब से प्रकाशित किया।

Please visit us on internet at :-
For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,
Website & Live video -

www.ratwarasahib.in
www.ratwarasahib.org } **(Every sunday)**

Email :sratwarasahib.in@gmail.com

विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका - बाबा सतनाम सिंह अटवाल
फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा - भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर
फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बैंस - मोबाइल 001-604-862-9525
फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंगलैंड - बीबी गुरबख्श कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी
फोन:0044-121-200-2818 फैक्स :0044-121-200-2879,
भाई अरविंदर सिंह (राज) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जस्प्रीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन (पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी)
8437812900,9417214391, 9417214379,

* गुरू गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(CBSE) - 0160-2255003

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सैंटर - **96461-01996**

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(PSEB) अंग्रेजी माध्यम - **95920-55581**

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल (मुफ्त)
98786-95178, 92176-93845

* इंटरनैशनल डिवाइन स्कूल आफ़ नर्सिंग -
94172-14382

* इंटरनैशनल डिवाइन कालेज आफ़ ऐजूकेशन (बी. एड.)
94172-14382

* अकाल वृद्ध आश्रम (मुफ्त) **98157-28220**

विशेष जानकारी के लिए

श्री मान जी	-	98551-32009
श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग	-	94647-12900
आडियो-वीडियो लाईब्रेरी	-	98728-14385, 98555-28517
केवल टी.वी. नेटवर्क	-	94172-14385

अन्य सम्पर्क नम्बर
98889-10777, 96461-01996, 9417214381

विषय-सूची

1. सम्पादकीय 5
भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

2. बारह माहा 6
डा. जगजीत सिंह

3. लाल रंगु तिस कउ लगा जिस के वडभागा।। 9
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

4. बाबाणियाँ कहानियाँ 21
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

5. गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।। 24
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

6. आत्म ज्ञान 40
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

7. नामु प्रभू का लागा मीठा 44
सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

8. होला महल्ला 49
डा. जगजीत सिंह

9. गुरबाणी अर्थ भण्डार 52
सन्त हरी सिंह जी रन्धावे वाले

10. गुरू गोबिंद सिंह रचित - जफरनामा 54
सन्त निरंजन सिंह नूर

11. नौवें रत्न - सन्त ईशर सिंह जी महाराज, राड़ा साहिब 56
ज्ञानी मेहर सिंह जी

12. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार 61
डा. स्वामी राम जी

13. विशेष जानकारी - रतवाड़ा साहिब में गुरमति समागम, बैंक खाता, 63
आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी,
तथा पुस्तक सूची

सम्पादकीय

भाई डा. सुखविन्दर सिंह

काइआ रंङणि जे थीअै पिआरे पाईअै नाउ मजीठ ॥
रंङण वाला जे रंङै साहिबु अैसा रंगु न डीठ ॥ 2 ॥
जिन के चोले रतड़े पिआरे कंतु तिना कै पासि ॥
धूड़ि तिना की जे मिलै जी
कहु नानक की अरदासि ॥ ***अंग - 722***

मौसम के दृष्टिकोण से मार्च का महीना नई बहार वाला तथा खुशियों से भरपूर माना गया है क्योंकि इस माह में ठंड व कोहरे से छुटकारा मिल जाता है और सारी वनस्पति में एक अत्यन्त आनन्ददायक बहार का-सा वातावरण हो जाता है। ठंड की मार को झेलने में नाकामयाब पुराने पत्ते झड़ जाते हैं और नवीन कोपलें फूटना शुरू हो जाती हैं। हरियाली पुनर्जन्म लेने लगती है, फलस्वरूप वनस्पति में नए जीवन का पदार्पण होने लगता है। इस मौसम परिवर्तन का प्रभाव मानवीय-मन पर पड़ना स्वाभाविक ही है। दरअस्ल अब मानव-मन भी ठंड के प्रभाव से कुछ राहत महसूस करता है क्योंकि वनस्पति में यानि वृक्षों आदि में हरियाली तथा पौधों में फूलों की बहार को देखकर मन अत्यन्त पुलकित होता है। खिले हुए फूलों की भांति मन में उल्लास उत्पन्न होता है, लेकिन उल्लास के शिखर को छूना अभी शेष होता है यानि कि मंजिल-ए-मकसूद अभी दूर ही प्रतीत होती है। वनस्पति की हरियाली को देखकर मन में उल्लास तो आता है लेकिन यह उल्लास अल्पकालिक ही होता है क्योंकि मौसम में एक दो महीने में पुनः बदलाव आ जाना होता है। यह सब हुक्म का ही खेल है। कहने का तात्पर्य यह है कि बसन्त ऋतु में बातावरण में से मिली प्रसन्नता, यानि कि फूलों व वनस्पति को देखकर उत्पन्न हुआ उल्लास शाश्वत नहीं होता है। इसी प्रकार का परिवर्तन निर्मल, पावन, दयावान व प्रकृति प्रेमी हृदयों के अन्दर भी घटित होता है। दूसरी तरफ कठोर मन वालों यानि कि सत्य, सन्तोष, दया, क्षमा व धैर्य विहीन मन वालों पर प्रकृति की कोमलता का अहसास ही नहीं होता है, उसे तो अपने व अन्य मनुष्यों के कोमल मनों की दर्द व पीड़ा का पता ही नहीं चल पाता है। संसार के अन्दर जो उत्तरोत्तर अशान्त वातावरण उत्पन्न हो रहा है वह इसी प्रकार की वृत्तियों का परिणाम है। बेचैनी, अशान्ति, क्लह-क्लेश, झगड़े, निराशता, सामाजिक मूल्यों का ह्रास, अधर्म का बोलबाला, दिखावा, पाखण्ड, कथनी और करनी में फर्क, यानि कि एक नहीं बल्कि अनेकों प्रकार की गिरावटों ने मानवीय मन को अपने चंगुल में फंसाया हुआ है। सुख के साधनों की भरमार, टैक्नालॉजी तथा इंटरनैट जैसी सुविधाओं में वृद्धि के बावजूद मानवीय मन अशान्त क्यों है? क्या इस प्रश्न का जवाब कहीं पर है? या इस प्रश्न के समाधान के लिए कितना समय चाहिए? यह आज भी एक जटिल समस्या है। उपर्युक्त सारे प्रश्नों का उत्तर हाँ में मिल जाएगा। बस, इसके लिए प्रार्थनारत होने की जरूरत है, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की शरण में जाने की जरूरत है। साहिब श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी तथा सारा सिक्ख इहितास इन प्रश्नों के उत्तर के लिए एक प्रकाश स्तम्भ की भांति है। श्री गुरू जी केवल प्रकाश ही प्रदान नहीं करते हैं बल्कि वे अपने सिक्ख को शक्ति भी प्रदान करते हैं और प्रेरणा भी प्रदान करते हैं।

गुरबाणी इसु जग महि चानणु करमि वसै मनि आए॥
अंग - 67

गुरवाणी में रंगा हुआ मन, नाम-वाणी में रंगा हुआ मन प्रत्येक समय व प्रत्येक परिस्थिति में, प्रत्येक स्थान पर तथा प्रत्येक क्षेत्र में सदैव बुलन्दावस्था में ही रहेगा। इसका जीता जागता उदाहरण है - सिक्ख इतिहास। गुरू साहिबानों द्वारा स्वयं पर झेली हुई असह्यनीय मुसीबतों को सहर्ष स्वीकार करना एक लाजवाब उदाहरण प्रस्तुत करता है। संसार के राजनैतिक व धार्मिक इतिहास में कहीं भी इस प्रकार का उदाहरण नहीं मिलता है जैसे कि सर्वस्वदानी सतगुरू गुरू गोबिंद सिंह महाराज तथा उनके सिंहों व सिंहनियों, साहिबजादों तथा गुरू जी के नादी व बिन्दी वंश द्वारा विषम मार्गों व विषम घाटियों में भी उस परमात्मा के हुक्म के आगे सहर्ष सिर झुकाया है तथा बुलन्दावस्था में रहते हुए उसका हार्दिक धन्यवाद किया है। आप सबने बुलन्दावस्था में रहते हुए मानवता को एक नया पाठ दृढ़ करवाया -

गुरमुखि रंगि चलूलै राती हरि प्रेम भीनी चोलीअै ॥
अंग - 527

नानक भगता सदा विगासु ॥
सुणिअै दूख पाप का नासु ॥ ***अंग - 2***

होला महल्ला, इसी बुलन्दावस्था का प्रतीक है। इसकी विलक्षणता ही हमारे लिए गौरवमयी है। परमात्मा के नाम में रंगे रहना, गौरवमयी है। परमात्मा के किसी भी हुक्म को सहर्ष स्वीकार करना, दुख-सुख को समान समझना, सम्पूर्ण मानवता का भला मांगना, संयोग तथा वियोग की श्रृंखला को जैसा भी है, उसी अनुरूप में स्वीकार करना ही बुलन्दावस्था है और यही शाश्वत उल्लास है तथा यही जीवन की रौ है। इस प्रकार का जीवन व्यतीत करते हुए अपने मूल व अपने ध्येय

(शेष पृष्ठ 51 पर)

चेति का महीना

(चैत्र माह की संक्रान्ति - 14 मार्च, 2018 दिन बुधवार)

डा. जगजीत सिंह
मुख्य सम्पादक

श्री गुरू अरजन देव जी द्वारा रचित राग माझ में तथा श्री गुरू नानक देव जी द्वारा रचित राग तुखारी में फाल्गुन माह)

राग माझ महला 5
किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥
चारि कुंट दह दिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम ॥
धेनु दुधै ते बाहरी कितै न आवै काम ॥
जल बिनु साख कुमलावती उपजहि नाही दाम ॥
हरि नाह न मिलीऐ साजनै कत पाईऐ बिसराम ॥ जितु
घरि हरि कंतु न प्रगटई भठि नगर से ग्राम ॥
स्रब सीगार तंबोल रस सणु देही सभ खाम ॥
प्रभ सुआमी कंत विहूणीआ मीत सजण सभि जाम॥
नानक की बेनंतीआ करि किरपा दीजै नामु ॥
हरि मेलहु सुआमी संगि प्रभ जिस का निहचल धाम॥
अंग - 133

शब्दार्थ - किरति - पूर्वजन्म के कर्मों की कमाई, के - अनुसार, राम - परमात्मा, चारि - चहुँओर, दहदिसि - दसों दिशाओं, शाम - शरण, धेनु - गाय, बाहरी - बिना, साख - खेती, दाम - मूल्य, नाह - पति, कत - कैसे, बिसराम - आराम, जिउ घरि - जिस हृदय में, भठि - तप्त भट्ठी, ग्राम - गाँव, स्रव - सभी, तंबोल - पान के पत्ते, सण - समेत, देही - शरीर, खाम - कच्चा, नाशवान, जाम - यम या जिंद के वैरी, धाम - टिकाना।

व्याख्या - मनुष्य, प्रभु से क्यों बिछुड़ा हुआ है? यह बहुत ही अहम प्रश्न है जो कि प्रत्येक जिज्ञासु के मन में उठता है। श्री गुरू अरजन देव जी इसका बहुत ही सरल व स्पष्ट तथा सही उत्तर देते हुए कथन करते हैं कि मनुष्य अपने कर्मों के कारण प्रभु जी से बिछुड़ जाता है। हमारे द्वारा किए गए कर्म ही हमारे संस्कार बनते हैं, जो कि सूक्ष्म शरीर का भाग बन जाते हैं, जिनके फलस्वरूप मनुष्य, प्रभु जी से बिछुड़ कर जन्म-मरण के चक्रव्यूह में पड़ जाता है। बिछोड़े का दोष किसी अन्य को नहीं दिया जा सकता है क्योंकि मनुष्य जो कर्म करता है, वह उसी का प्रतिफल भोगता है। फिर दोष किसे दिया जाए?

ददै दोसु न देउ किसै दोसु करंमा आपणिआ ॥
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना॥
अंग - 433

अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि फिर मिलाप कैसे हो? मिलाप प्रभु जी की ही कृपा है। अपने अहं के सहारे, अपने कर्मों के सहारे, कोई भी मनुष्य प्रभु जी की प्राप्ति नहीं कर सकता है। अच्छे कर्मों के फलस्वरूप मनुष्य शरीर तो मिल सकता है लेकिन जन्म-मरण से मुक्त होकर, मुक्ति प्राप्त करना तो केवल 'उसकी कृपा दृष्टि' के द्वारा ही सम्भव है-

करमी आवै कपड़ा नदरी मोखु दुआरू ॥ अंग - 2

यहाँ पर श्री गुरू अरजन देव जी कृपा कर रहे हैं कि हे प्रभु जी! हम अपने कर्मों के कारण आपसे बिछुड़े हुए हैं और हम आपको भूले बैठे हैं। कृपा करके हमें अपना मिलाप प्रदान करने की कृपा करो। संस्कारों की पकड़ के कारण तथा माया-मोह में फँसे होने के कारण हम चारों दिशाओं में यानि कि अनेकों तरफ सुखों की तलाश में भटकते रहते हैं और अन्त में अब थक-हार कर, हे प्रभु जी! आपकी शरण में आए हैं।

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम।
चारि कुंट दहदिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम॥
अंग - 133

जिस प्रकार से दूध न देने वाली गाय किसी काम नहीं आती है, जिस प्रकार से पानी के बिना खेती सूख जाती है, फसल की प्राप्ति नहीं होती है, धन की कमाई नहीं हो सकती है, उसी प्रकार से नाम के बिना, हमारा जीवन व्यर्थ चला जाता है। खसम - प्रभु जी को मिले बिना किसी अन्य विधि से या अन्य स्थान पर सुख मिल ही नहीं सकता है और सुख मिले भी कैसे? क्योंकि जिस हृदय रूपी घर में प्रभु रूपी पति निवास नहीं करता है, वह हृदय या घर, गाँव या शहर तप्त भट्ठी की भांति होता है, दुखों का घर होता है। पति से बिछुड़ी हुई स्त्री के लिए अपने शरीर समेत सारे हार-श्रृंगार व पान-बीड़े तथा अन्य रस व्यर्थ ही प्रतीत होते हैं तथा पति के बिछोड़े में सारे सज्जन-मित्र भी अच्छे नहीं लगते हैं बल्कि वे तो इस जीवन के दुश्मनों की भांति ही प्रतीत होते हैं।

गुरू महाराज जी विनती रूप में फुरमान करते हैं कि हे प्रभु जी! कृपा करके हमें अपने नाम की बख्शिश करो

तथा अपने चरणों के साथ जोड़ कर रखो। अन्य सभी सहारे तो नाशवान हैं। एक आपका सहारा व आपका घर ही शाश्वत है अतः हमें अपने चरणों के साथ जोड़ कर रखने की कृपा करो।

चेति गोविंदु अराधीऐ होवै अनंदु घणा ॥
संत जना मिलि पाईऐ रसना नामु भणा ॥
जिनि पाइआ प्रभु आपणा आए तिसहि गणा ॥
इकु खिनु तिसु बिनु जीवणा बिरथा जनमु जणा ॥
जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा ॥
सो प्रभु चिति न आवई कितड़ा दुखु गणा ॥
जिनी राविआ सो प्रभू तिंना भागु मणा ॥
हरि दरसन कंउ मनु लोचदा नानक पिआस मना ॥
चेति मिलाए सो प्रभू तिस कै पाइ लगा ॥

अंग - 133

शब्दार्थ - चेति - चैत्र माह में, घणा - बहुत, रसना - जीभ, भणा - उच्चारण करना, तिसहि - उसे, आए गणा - आना, जन्म लेना व्यर्थ गिना जाएगा, महीअलि - धरती और आकाश के मध्य, मणा मणा मूँही - बहुत, कउ - को, मना - मन में, पाइ लगा - पैरों में पड़ूँ।

चेति गोविंदु अराधीऐ होवै अनंदु घणा॥
संत जना मिलि पाईऐ रसना नामु भणा॥

चैत्र का माह यानि कि बसन्त ऋतु का महीना अत्यन्त सुहावना महीना है, प्रत्येक तरफ खिली हुई फुलवाड़ी मन को आनन्द देती है। यदि इस माह की मीठी ऋतु में प्रभु जी का सिमरन करें तो सिमरन की बरकत से बहुत आत्मिक आनन्द प्राप्त होता है लेकिन रसना के साथ प्रभु जी का सिमरन करने की कृपा तो गुरू प्यार वाले नाम अनुभवी सन्तजनों को मिलकर ही प्राप्त होती है। संसार में उसी मनुष्य का आना सफल है जिसने सिमरन की मदद से अपने परमात्मा का मिलाप प्राप्त कर लिया है। दरअस्ल प्रभु जी की याद के बिना एक क्षण भर का समय भी व्यतीत करना अपने जीवन को बरबाद करने जैसा ही है, जैसे कि भक्त कबीर जी का फुरमान है -

भजहु गोबिंद भूलि मत जाहु ॥
मानस जनम का एही लाहु ॥ *अंग - 1159*

जिनि पाइआ प्रभु आपणा आए तिसहि गणा।
इकु खिनु तिसु बिनु जीवणा बिरथा जनमु जणा।
जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा॥
सो प्रभु चिति न आवई कितड़ा दुखु गणा॥
जिनी राविआ सो प्रभू तिंना भागु मणा॥

वास्तविक जीवन तो उसकी याद में जीना है और वह आत्मिक व शाश्वत जीवन है। जैसे कि गुरवाणी का फुरमान है -

जीवना सफल जीवन सुनि हरि जपि जपि सद जीवना॥

अंग - 1019

जो प्रभु जी पानी में, धरती में, आकाश तथा जंगल में यानि कि कण-कण में परिपूर्ण है, सर्वव्यापक है, यदि ऐसा प्रभु जिसके हृदय में न बसे तो उस मनुष्य के दुखों की गिनती ही नहीं हो सकती है अर्थात उसका जीवन अत्यन्त दुखों के साथ घिर जाता है (परमेसर ते भुलिआं विआपनि सभे रोगु।।) लेकिन जिन गुरू प्यार वालों ने उस प्रभु को अपने हृदय में बसा लिया है, मानो उनका भाग्य जागृत हो चुका है यानि कि वे अत्यन्त भाग्यशाली हैं -

वडभागी मेरा प्रभु मिलै ताँ उतरहि सभि बिओग॥

अंग - 135

इस प्रसंग में श्री गुरू तेग बहादर जी का फुरमान है -

घट घट मै हरि जू बसै संतन कहिओ पुकारि ॥
कहु नानक तिह भजु मना भउ निधि उतरहि पारि ॥

अंग - 1427

अर्थात मोह-माया के वश में होकर हृदय में बस रहे हरि जी को भूल जाना बहुत बड़ी भूल है तथा उस प्रभु जी का निरन्तर सिमरन करने वाला मनुष्य संसार रूपी भयानक समुद्र को सरलता से ही पार कर लेता है। इस सारी विचारधारा को श्री गुरू अरजन देव जी ने अधोलिखित शबद में भली भांति स्पष्ट किया है -

दिनु राति कमाइअड़ो सो आइओ माथै ॥
जिसु पासि लुकाइदड़ो सो वेखी साथै ॥
संगि देखै करणहारा काइ पापु कमाईऐ ॥
सुक्रितु कीजै नामु लीजै नरकि मूलि न जाईऐ ॥
आठ पहर हरि नामु सिमरहु चलै तेरै साथे ॥
भजु साधसंगति सदा नानक मिटहि दोख कमाते ॥

अंग - 461

हरि दरसन कउ मनु लोचदा नानक पिआस मना॥
चेति मिलाए सो प्रभू तिस कै पाइ लगा॥

प्रस्तुत शबद की अंतिम पंक्तियों में श्री गुरू जी फुरमान करते हैं कि उनका मन भी प्रभु जी के दर्शनों के लिए लालायित है। श्री गुरू नानक देव जी फुरमान करते हैं कि उनके मन में हरि-दर्शनों की प्यास बनी हुई है। जो भी मनुष्य हरि जी का मिलाप करवा दे, दर्शन दीदार करने में सहायता करे तो मैं उसके चरणों में पड़ूँगा अर्थात उसका मैं बहुत अधिक मान-सम्मान करूँगा।

तुखारी छंत महला 1
तू सुणि किरत करंमा पुरबि कमाइआ ॥ सिरि सिरि सुख सहंमा देहि सु तू भला ॥ हरि रचना तेरी किआ गति मेरी हरि बिनु घड़ी न जीवा ॥ प्रिअ बाझु दुहेली कोइ न बेली गुरमुखि अंम्रितु पीवाँ ॥ रचना राचि रहे

निरंकारी प्रभ मनि करम सुकरमा ॥ नानक पंथु निहाले सा धन तू सुणि आतम रामा ॥ अंग - 1107

शब्दार्थ - तू सुणि - हे प्रभु जी! मेरी विनती सुनो, किरत करंमा - किए गए कर्म, पूरबि - पूर्व जन्म के, सिरि सिर - प्रत्येक जीव के सिर पर, सहंम - सहम, गति - सामर्थ्य, दुहेली - दुखी, बेली - दोस्त, गुरमुखि - गुरू की शरण लेकर, अंम्रित - अमर जीवन प्रदान करने वाला परमात्मा का नाम निरंकारी - रचना रच कर निर्लिप्त, सुकरमा - अच्छे कर्म, पंथु - मार्ग, निहाले - देख रही है, साधन - जीव रूपी स्त्री, आतम रामा - हे सर्व व्यापक प्रभु!

तू सुणि किरत करंमा पुरबि कमाइआ ॥
सिरि सिरि सुख सहंमा देहि सु तू भला ॥

हे परमात्मा! आप समस्त जीवों को उनके पिछले जन्म के कर्मों के अनुसार, उन्हें दुख या सुख प्रदान करते हो। यह सब कुछ आपके हुक्मानुसार तथा जीवों की भलाई के लिए होता है।

हरि रचना तेरी किआ गति मेरी हरि बिनु घड़ी न जीवा॥
प्रिअ बाझु दुहेली कोइ न बेली गुरमुखि अंम्रितु पीवाँ॥

सारा संसार आपकी रचना है और हम जीवों के वश में तो कुछ भी नहीं है। आपकी याद के बिना मेरे लिए एक पल भर जीना भी मुझे पसन्द नहीं है। हे मेरे प्रियतम! मैं तो आपके बिना बहुत दुखी होता हूँ क्योंकि आपके बिना संसार में मेरा कोई भी साथी नहीं है। यदि आपकी कृपा हो जाए तो मुझे किसी गुरुमुख की संगत द्वारा नाम रूपी अमृत प्राप्त हो जाए तो फिर मेरे दुखों का अन्त हो सकता है।

रचना राचि रहे निरंकारी प्रभ मनि करम सुकरमा ॥
नानक पंथु निहाले सा धन तू सुणि आतम रामा ॥

परमात्मा, अपनी रचना को रच कर इससे निर्लिप्त रहता है लेकिन जीव जो हैं, वे इस रचना के अन्दर ही लिप्त रहते हैं यानि कि वे तो इसके अन्दर पूरी तरह से धँसे हुए रहते हैं, जबकि प्रभु जी को मन में बसाना ही उत्तम कर्म है। हे पति परमेश्वर! जीवात्मा रूपी स्त्री आपका रास्ता देख रही है, कृपा व दया करके उसे दर्शन प्रदान करो तथा उसकी प्यास बुझाओ -

बाबीहा प्रिउ बोले कोकिल बाणीआ ॥
साधन सभि रस चोलै अंकि समाणीआ ॥
हरि अंकि समाणी जा प्रभ भाणी सा सोहागणि नारे॥
नव घर थापि महल घरू उचउ
निज घरि वासु मुरारे ॥
सभ तेरी तू मेरा प्रीतमु निसि बासुर रंगि रावै ॥
नानक प्रिउ प्रिउ चवै बबीहा कोकिल सबदि सुहावै॥
अंग - 1107

जिस प्रकार से बाबीहा प्रिउ प्रिउ बोलता है और कोयल मीठे बोल बोलती है उसी प्रकार से जीव रूपी स्त्री प्रभु मिलाप का आनन्द उठाती है क्योंकि वह परमात्मा को अच्छी लगती है। वह प्रभु चरणों से जुड़ी रहती है और वह अत्यन्त भाग्यशाली है। वह शारीरिक इन्द्रियों को नियन्त्रण में तथा व्यवस्थित ढंग से रखकर प्रभु जी के अन्दर टिकी रहती है तथा दिन-रात उसका सिमरन करती रहती है। जिस प्रकार से बाबीहा प्रिउ-प्रिउ बोलता है, जिस प्रकार से कोयल मीठा बोलती है उसी प्रकार से प्रभु-प्रेम वाली स्त्री गुरु-शब्द के माध्यम से उसकी स्तुति में मीठे बोल बोलती हुई अति सुन्दर लगती है।

तू सुणि हरि रस भिंने प्रीतम आपणे ॥
मनि तनि रवत रवंने घड़ी न बीसरै ॥
किउ घड़ी बिसारी हउ बलिहारी हउ जीवा गुण गाए॥
ना कोई मेरा हउ किसु केरा हरि बिनु रहणु न जाए॥
ओट गही हरि चरण निवासे भए पवित्र सरीरा ॥
नानक द्रिसटि दीरघ सुखु पावै गुर सबदी मनु धीरा॥
अंग - 1107

भावार्थ - हे मेरे रसिक प्रियतम! मेरे मन व तन में रमे हुए मेरे प्रियतम! तुम मेरी एक विनती सुन लो। तुम मुझे एक घड़ी के लिए भी भुलाओ नहीं, तुम्हारी स्तुति करके या तुम्हारा यशगान करके मुझे आत्मिक आनन्द प्राप्त होता है। दरअस्ल परमात्मा ही जीव के साथ हमेशा निभने वाला साथी है।

बरसै अंम्रित धार बूंद सुहावणी ॥
साजन मिले सहजि सुभाइ हरि सिउ प्रीति बणी ॥
हरि मंदरि आवै जा प्रभ भावै धन उभी गुण सारी ॥
घरि घरि कंतु रवै सोहागणि हउ किउ कंति विसारी॥
उनवि घन छाए बरसु सुभाए मनि तनि प्रेमु सुखावै॥
नानक वरसै अंम्रित बाणी करि किरपा घरि आवै ॥
अंग - 1107

भावार्थ परमात्मा की स्तुति करने से मनुष्य का मन विकारों की तरफ से उपराम रहता है और उसके अन्दर प्रत्येक समय परमात्मा के मिलाप का आकर्षण बना रहता है।

चेतु

चेतु बसंतु भला भवर सुहावड़े ॥
बन फूले मंझ बारि मै पिरू घरि बाहुड़ै ॥

अर्थ - चैत्र का माह सुहावना लगता है और बसन्त का महीना प्यारा लगता है। इस मौसम में वनस्पति को फूल लग जाते हैं, भंवरे सुन्दर लगते हैं। अत: जीव रूपी स्त्री इस मौसम में यह कामना करती है कि इस मौसम में मेरे हृदय का कमल फूल भी खिल सकता है। बशर्ते मेरा प्रभु रूपी पति मेरे हृदय रूपी घर में आकर बस जाए।

(शेष पृष्ठ 44 पर)

लाल रंगु तिस कउ लगा जिस के वडभागा।।

('होली कीनी संत सेव' के उपलक्ष्य में)

सन्त बाबा वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

सतिनामु श्री वाहिगुरु,
धंन श्री गुरु नानक देव जी महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ॥
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥
अंग - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ अंग - 289

धारना - प्रभ सभ किछु तेरा जी,
मैं किछु नाही - मैं किछु नाही।

मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा ॥
ईधै निरगुन उधै सरगुन
केल करत बिचि सुआमी मेरा ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
नगर महि आपि बाहरि फुनि आपन
प्रभ मेरे को सगल बसेरा ॥
आपे ही राजनु आपे ही राइआ
कह कह ठाकुरु कह कह चेरा ॥ 1 ॥
का कउ दुराउ का सिउ बलबंचा
जह जह पेखउ तह तह नेरा ॥
साध मूरति गुरु भेटिए नानक
मिलि सागर बूंद नही अन हेरा ॥ 2 ॥ 1 ॥ 117 ॥
अंग - 827

धारना - खेले सुआमी मेरा
निरगुण हो के, सरगुण हो के।

साधुसंगत जी! अपनी चित्त वृत्तियों को एकाग्र करो, नेत्रों केद्वारा गुरू स्वरूप का ध्यान करो, कानों के द्वारा जो बोला जा रहा है, उसे विचार कर हृदय में धारण करो। सुदूरवर्ती स्थानों से संगत पहुँची हुई है। बहिराम से संगत आई है, धमोट से आए हैं, दिल्ली से आए हैं और भी दूर-दराज से संगत आई है। अमेरिका से भी प्रेमीजन आए हुए बैठे हैं, थोड़ा सा ध्यान देकर श्रवण करो क्योंकि जो आज त्यौहार है उसे रंगों का त्यौहार कहा जाता है, बहुत ही खुशी के साथ अपने ऊपर रंग डलवाए जा रहे हैं। विशेष रूप से जो लाल रंग है, गुलाबी रंग है, उसे ज्यादा पसन्द किया जा रहा है और इसके पीछे कोई बहुत बड़ी सोच है। दरअस्ल प्रत्येक बात के दो पक्ष होते हैं, एक होता है सांसारिक पक्ष। यानि कि बाह्य पक्ष और दूसरा होता है अध्यात्मिक पक्ष, यानि कि आन्तरिक पक्ष। विचार करना सयाने लोगों का कार्य हुआ करता है और यह अपनी अपनी समझ के अनुसार होता है। अतः रंगों को बहुत पसन्द किया जा रहा है। यह रंग जो अब पड़ रहा है, यह खुशियों के प्रतीक के रूप में है। बच्चे दौड़ते घूम रहे हैं, मोटरसाइकिलों के साइलेन्सर उतारे हुए हैं और चहुँओर शोरगुल मचा हुआ है। खुशी का ऐसा वातावरण है कि जिसके अन्दर जीव कुछ extraordinary महसूस कर रहा है। आदमी के अन्दर भाव होते हैं। इन भावों में से कुछ मारू होते हैं और कुछ उसारू होते हैं। जो मारू भाव होते हैं, उन्हें नियन्त्रित करना बहुत आवश्यक होता है। ये खुशियाँ इस प्रकार से होती हैं जैसे कि मानो बहुत सारी बर्फ जमी हुई हो, धूप पड़ जाए तो बर्फ पिघल कर पानी बन जाती है, पानी मैदानों में आ जाता है और वह बहुत परोपकार करता है और उसके बाद वह पानी पुनः समुद्र में लीन हो जाता है। इस प्रकार से जो खुशियाँ होती हैं, वह समाज व स्वास्थ्य की एक सुदृढ़ निशानी हुआ करती है। यदि व्यक्ति रोने वाला हो तो उसका स्वास्थ्य भी खराब होता है और वह दुःखी भी रहता है तथा वह दूसरों को बुरा भी मानता है। उसके अन्दर जीवन की लहर नहीं चला करती है। यह बात समझनी चाहिए। एक खुशी है जो कि थोड़ी देर के लिए होती है, उसे क्षणभंगुर कहते हैं। क्या कोई ऐसी खुशी भी है जो कि कभी कम ही न हो? वह खुशी कभी कम न हो बल्कि बढ़ती ही जाए। अतः गुरू जी फुरमान करते हैं कि ऐ प्रेमीजनो! यह लाल रंग जो बाहरी है, यह उतर जाएगा, जब तुम मुँह धोओगे या नहाओगे। यह कच्चा रंग है। एक रंग ऐसा भी है जो कि भाग्यशाली पुरुषों को ही प्राप्त हुआ करता है, है वह भी लाल। यह रंग जो है कपड़े को रंग लो, वह मैला हो जाएगा। जबकि इस रंग की विशेषता यह है कि यह कभी

भी मैला नहीं होगा। उसके बारे में महाराज जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

लाल रंगु तिस कउ लगा जिस के वडभागा ॥
मैला कदे न होवई नह लागै दागा ॥ अंग - 808

ऐसा रंग, दुनिया के अन्दर यदि एक बार भी लग जाए तो फिर न तो यह दोबारा मैला होता है और न ही इसे कोई दाग लगता है। बहुत बड़ी बात महाराज जी ने कह दी है कि ऐसा रंग दुनिया के अन्दर है जो कि कभी भी मैला नहीं होता है, चाहे दुख आ जाए, कितनी ही उदासियाँ आ जाएं। यह रंग ही ऐसा है कि यह कभी भी मैला नहीं होता है। चाहे इस शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके रख दो, यह फिर भी मैला नहीं होता है -

काइआ कापरु चीर बहु फारे
हरि रंगु न लहै सभागा ॥ अंग - 985

यह बहुत सुन्दर रंग है, यदि कहीं मिल जाए और फिर ललारी इसे रंग दे। यह अपने वश की बात नहीं है। यदि कहीं कृपा करके वह रंग दे तो दोबारा यह रंग नहीं उतरा करता है। दूसरी तरफ हमारे अन्दर बहुत से बुरे रंग भी हैं। एक नफरत का रंग है, निन्दा का रंग है, ईर्ष्या का रंग है, क्रोध का रंग है, लोभ का रंग है, मोह का रंग है, अहंकार का रंग है, आशाओं का रंग है, तृष्णा का रंग है, विषय विकारों व भोगों का रंग है। इस कैटेगरी के अन्दर बहुत सारे रंग हैं। गुरू जी कहते हैं कि प्रेमीजनो! यदि इस रंग में अपने चोले को रंग लिया जाए तो परमेश्वर को यह बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगता है। ये इतने गलत रंग हैं कि आँखों को देखने में भी अच्छे नहीं लगते हैं। चाहे जितनी अधिक सुन्दरता हो ये रंग उसे भी मैला कर देते हैं -

इहु तनु माइआ पाहिआ पिआरे
लीतड़ा लबि रंगाए ॥
मेरै कंत न भावै चोलड़ा पिआरे किउ धन सेजै जाए॥
अंग - 722

कहते हैं कि वह 'उसे' (वाहिगुरू जी को) अच्छा ही नहीं लगता है। जिसने इस सृष्टि का निर्माण किया है, उसे यह रंग बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगता है। वे रंग बदबूदार हैं, आँखों को देखने में वे बिल्कुल भी अच्छे नहीं लगते हैं। वे आँखों को अपनी तरफ आकर्षित नहीं करते हैं। ये सब वे रंग हैं, जिन्हें माया के रंगों की श्रेणी दी गई है। जो इसके मुकाबिले पर दूसरे रंग हैं, उन्हें नाम का रंग कहा गया है। असर तो शरीर के ऊपर इनका भी होता है और असर उनका भी होता है। इसमें निराशा आती है, नफरत आती है, शरीर की जो कोशिकाएँ होती हैं, वे क्षतिग्रस्त हो जाती हैं और ऐसे बुरे रंग हैं कि ये शरीर पर भी बुरा प्रभाव डालते हैं और मन के ऊपर भी बुरा प्रभाव डालते हैं, बुद्धि पर भी बुरा प्रभाव डालते हैं तथा चित्त पर भी बुरा प्रभाव डालते हैं। आदमी का जो शरीर है, इन रंगों के कारण समय से पहले ही बुड्ढा हो जाता है लेकिन दूसरा रंग कौन सा है? उन रंगों को यदि किसी श्रेणी में लाया जाए तो वह है नाम का रंग। नाम का जो रंग है वह किस चीज के साथ महसूस होता है? दो चीजें होती हैं - एक तो आदमी के अन्दर हर समय उल्लास रहता है। जब आदमी मुरझा जाए तो समझ लो कि वह टूट गया, उससे कोई गलती हो गई। होता यह है कि वह supreme source के साथ से टूट गया है या उसने परमेश्वर की तरफ से पीठ कर ली है। परमेश्वर पर विश्वास टूट गया है और परमेश्वर तो प्यार का श्रोत है। उसके अन्दर तो विशुद्ध प्यार ही प्यार है -

जत्र तत्र दिसा विसा हुइ फैलिओ अनुराग।
जापु साहिब

वह प्यार के श्रोत से टूट गया है और टूटने से रंग फीका पड़ गया है। अभी पूरी तरह से रंग चढ़ा ही नहीं है। जब पूरी तरह से चढ़ गया तो -

काइआ कापरु चीर बहु फारे हरि रंगु न लहै सभागा ॥

भाई मतीदास जी को यह फतवा लगा दिया कि इसने दिल्ली व लाहौर को गरक करने की बात कही है। यह बात जरूर है कि इसके मुरशद ने कहा है कि यह बात हम लोगों ने नहीं करनी है। अत: जानते हैं कि अब यह ऐसी बात नहीं करेगा। अब इसे अच्छी तरह से सजा देते हैं। कहने लगे कि इसे अब लकड़ी के शतीरों में बाँधकर सिर पर आरा रखकर दो हिस्सों में चीर डालो। उसे सजा दे दी गई, लेकिन उसके ऊपर जो नाम का रंग चढ़ा हुआ था, वह नहीं उतरा। उसी प्रकार से लाली चढ़ी पड़ी है। उसे दो भागों में चीरने से पहले जल्लाद ने कहा, भाई मतीदास! एक बात हम पहले पूछा करते हैं कि मौत व दीन-ए-इस्लाम ये दोनों तुलनात्मक रूप से तुम्हारे सामने हैं। यदि तुम दीन-ए-इस्लाम में आ जाते हो तो फिर तुम्हें जीने की गारंटी दे दी जाएगी अन्यथा फिर तुम्हारे लिए सजा-ए-मौत है। अब चुनाव तुम्हारे हाथ में है।

मतीदास जी कहने लगे कि ऐ जल्लाद! इस समय मैंने चुनना क्या है, क्योंकि जिसे तुम मौत कहते हो, वह मेरे लिए मौत नहीं है। मौत के आगे जहाँ से चक्र शुरू होता है, काल से ऊपर, वहाँ से हमारा जीवन शुरू हुआ करता है। जीते

जी हम मौत से पार हो चुके होते हैं और फिर मौत तो हउमै को हुआ करती है -

जिनि रचि रचिआ पुरखि बिधातै नाले हउमै पाई ॥
जनम मरणु उस ही कउ है रे ओहा आवै जाई ॥

अंग - 999

अतः यह तो कोई बात नहीं है जो कि तुम कह रहे हो।

इसके बाद जल्लाद कहने लगा कि दूसरी बात यह है कि क्या तुम्हारी कोई अन्तिम इच्छा है? खाने-पीने की कोई इच्छा हो या फिर कोई और इच्छा हो, तो फिर मैं तुम्हें पटरों में बाँधने से पहले तुम्हारी इच्छा को पूरी करने की कोशिश करूँ।

फतवा लगाने वाला काजी खड़ा हुआ है। वे (भाई मती दास जी) कहने लगे और अन्य मेरी कोई इच्छा नहीं है, बस एक इच्छा है कि आप मेरी पीठ गुरू की तरफ मत करो बल्कि मेरा चेहरा उधर कर दो। वह कहने लगा, भाई मतीदास! चेहरा तो हम उधर कर देते हैं लेकिन एक बात समझ में नहीं आई कि तुम्हारे चेहरे पर पीलिमा क्यों नहीं आई? तुम्हारा चेहरा लाल क्यों है? इतना लाल चेहरा तो, तब भी नहीं होता है जबकि कोई युवा व्याह करवाने के लिए जाता है, अथवा उसे कोई बहुत बड़ी प्राप्ति हो गई होती है, इसका क्या कारण है?

भाई मतीदास जी कहने लगे, तुम्हें इस समय कारण समझ में नहीं आ पाएगा क्योंकि तुम लोगों को असली जीवन का कोई ज्ञान नहीं है। तुम लोग जीवन इसी को कहते हो कि यह शरीर खाना-पीना खाकर जीवित रहे। इसका श्वास चलता रहे, लेकिन हम इसे जीवन नहीं कहते हैं। हमारी और तुम्हारी समझ में यही आधारभूत अन्तर है।

कहने लगा, तुम इसे फिर क्या कहते हो? भाई मतीदास जी कहने लगे, जो जीवन रंग से खाली है, प्यार से खाली है, वह हमारे लिए जीवन नहीं है। भले ही वह बादशाह क्यों न हो? भले ही वह सारी दुनिया का अमीर हो, सारी दुनिया का सबसे सुन्दर हो, सारी दुनिया का सबसे अधिक चतुर हो, सबसे ऊंची कुल के साथ सम्बन्ध रखने वाला हो, लेकिन भद्रपुरुष! हम उसे जीवित पुरुष नहीं कहते हैं, जब तक कि उसके अन्दर वास्तविक जीवन ने प्रवेश नहीं किया है, यानि कि जब तक उसे लाल रंग (नाम का रंग) नहीं लगा है। बल्कि उस समय तक तो हम उसे मुर्दा जीवन ही कहते हैं -

धारना - मिरतक कहीए नानका,
जिह प्रीत नहीं भगवंत।
अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि डिआनी धनवंत ॥
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत ॥

अंग - 253

पराकाष्ठा तक की पाँच विशेषताएँ एक ही व्यक्ति के पास हों। पहली बात तो यह है कि संसार के अन्दर कोई ऐसा व्यक्ति है ही नहीं जिसके पास ये पाँचों विशेषताएँ हों। सबसे अधिक सुन्दर भी, सबसे ऊँची कुल वाला भी हो, सबसे ऊँचे खानदान वाला भी हो, सबसे अधिक चतुर भी हो। प्रत्येक विषय पर, प्रत्येक बिन्दु पर बात कर सकता हो, मुँह के ज्ञान के द्वारा दूसरों पर प्रभाव डाल सकता हो, बेहद वह विद्वान भी हो और उसके पास इतना अधिक धन हो कि संसार का वह सबेस अधिक धनी व्यक्ति हो। संसार की दृष्टि में तो वह अलौकिक व्यक्ति है, सबसे ऊँचा व्यक्ति उसे समझा जाएगा लेकिन यदि हम रूहानी तराजू पर तौल कर देखें तो वह कुछ भी नहीं है बल्कि वह तो एक मृतक व्यक्ति या मृतक शरीर ही है -

मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत ॥

गुरू जी कहते हैं कि जिसके अन्दर प्यार की रौ नहीं बह रही है, उसे तो जीवित व्यक्ति ही मत कहो, उसका तो केवल रसायनिक जीवन ही है, खाना खा लिया, दाल खा ली, सब्जी खा ली, सुबह उठ कर नहा लिया, चलता फिरता रहा, कारोबार कर लिया, रात में फिर सो गया और उसे पता ही नहीं कि रूहानी जिन्दगी क्या होती है, प्यार वाली जिन्दगी क्या होती है क्योंकि उसे अभी रंग नहीं लगा है, उसे अभी रंग नहीं चढ़ा है। भाग्यशाली व्यक्ति तो वह होता है -

लाल रंगु तिस कउ लगा जिस के वडभागा ॥

जिसे लाल रंग लग जाए प्यार वाला रंग लग जाए।

भाई मतीदास जी कहने लगे भद्रपुरुष! यह बात तुम्हें समझ में आने वाली नहीं है क्योंकि तुम्हारी बुद्धि मोटी है, तुम तो अभी तक मनुष्यों की श्रेणी में भी नहीं पहुँच पाए हो बल्कि तुम तो अभी पशुओं से भी नीचे हो -

गुर मंत्र हीणसु जो प्राणी धिगंत जनम भ्रसटणह ॥
कूकरह सूकरह गरधभह काकह सरपनह तुलि खलह॥

अंग - 1356

जिसे अभी तक जीवन की समझ वाला गुरू से मन्त्र ही नहीं मिला है, वह देखने में तो व्यक्ति ही लगता है लेकिन उसका बौद्धिक विकास अभी पशु स्तर से भी नीचे है। पशुओं के अन्दर 25 प्रतिशत से लेकर 50 प्रतिशत तक की सुरति पाई जाती है। मनुष्य की सुरति 50 प्रतिशत से शुरू होती है

और ब्रह्मज्ञानियों की सुरति 75 प्रतिशत से शुरू होकर सौ प्रतिशत तक होती है। पूरी सुरति वाला व्यक्ति ही पूर्ण पुरुष होता है, वह तीन लोकों की बातों को जानने वाला होता है, भूत, भविष्य व वर्तमान की बातों को जानने वाला होता है। क्या होना है, कब होना है, क्यों हुआ है, कैसे हुआ है, उसे इन सब बातों का पता होता है। यह सुरति की जागृति पर निर्भर करता है। इस प्रकार भाई मतीदास जी कहने लगे कि तुम लोगों के अन्दर सुरति जागृत अवस्था में नहीं है बल्कि अभी तो मनुष्यों के स्तर तक भी नहीं है, पशु स्तर तक की सुरति है। इस प्रकार के लोगों की सुरति तो कुत्तों, बिल्लों, सूअरों, साँपों, गधों व कौओं जैसी हुआ करती है -

आवन आए स्रिसटि महि बिनु बूझे पसु ढोर ॥
नानक गुरमुखि सो बुझै जा कै भाग मथोर ॥
अंग - 251

वे इस संसार में आ तो गए और उनका शरीर भी मनुष्यों जैसा ही है लेकिन वास्तव में वे पशु स्तर के ही होते हैं। भद्रपुरुष! यदि सुरति जागृत हो जाए, प्यार का रंग लग जाए तो फिर अन्दर एक रस उत्पन्न हो जाता है। प्यार वाले किसी को भी देख लो, उसके जीवन में एक उल्लास होगा, आनन्द होगा, जबकि प्यार से रहित व्यक्ति एक मुरझाया हुआ व्यक्ति होगा। चाहे वह कितनी ही किताबें पढ़ता जाए, कितने ही विटामिन खाता रहे, कितने ही सैर सपाटे करता रहे, कितना ही लोगों को मिलता रहे। उसके ऊपर क्षणिक असर तो हो सकता है लेकिन उसके बाद वह पुनः मुरझा कर नीचे गिर जाएगा। दूसरी तरफ जिन्हें प्यार का रंग लगा हुआ है उन्हें प्यार का रंग प्रत्येक समय चढ़ा ही रहता है। गुरू जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

धारना - चड़ी रहे दिन रात, नाम खुमारी-नाम खुमारी।

पोसत मद अफीम भंग उतर जाइ परभाति।
नाम खुमारी नानका चड़ी रहे दिन राति। जनमसाखी

खुमारी का जो रंग है, वह लाल है, वह प्यार का रंग है और वह कभी उतरा नहीं करता है। भाई मतीदास जी के शरीर के दो हिस्से कर दिए गए लेकिन रंग नहीं उतरा। भाई दयाला जी को देगों के अन्दर उबाल दिया गया लेकिन रंग नहीं उतरा। भाई मनी सिंह जी का अंग-अंग काट दिया गया। रंग नहीं उतरा, भाई तारू सिंह जी की खोपड़ी उसके शरीर से अलग कर दी गई लेकिन रंग नहीं उतरा। यह जो रंग है यह दूसरे रंगों से श्रेष्ठ है और यह जब एक बार चढ़ जाता है तो फिर दोबारा नहीं उतरता है। यह चमकता भी है और खुमारी भी देता है। बाहर के रंगों को तो हम रख नहीं सकते हैं। यदि शरीर पर गिर गया तो **irritation** हो जाएगी, नहाना पड़ेगा, कपड़ों पर गिर गया तो फटाफट हम कपड़ें धोएँगे लेकिन जो पावन रंग है, वह है -

होली कीनी संत सेव ॥ *अंग - 1180*

साधुओं की सेवा करके हरि का यशगान करके जो होली मनाता है, वह परम पवित्र त्यौहार की उपयोगिता प्राप्त करता है।

अतः इस प्रकार से आप सभी लोग इस रंग को प्राप्त करने के लिए कथा-कीर्तन के रूप में यहाँ पर एकत्र हुए हो और इसके लिए दूर दराज से गुरू दरबार में पहुँचे हो। विचार यह है कि यह रंग लगे कैसे? क्या कोई ऐसा तरीका है जिसके द्वारा यह रंग चढ़ जाए और हमें बुलन्दावस्था प्राप्त हो जाए? हमें प्यार वाला जीवन प्राप्त हो जाए? अतः यह विचार यदि हमें समझ में आ जाए तो हमारे लाखों दुख एकदम ही टूट सकते हैं, सारी परेशानियां दूर हो सकती हैं। वास्तव में जीवन है क्या? जीवन के अन्दर पृथक-पृथक भाव होते हैं, किसी को यह जीवन महान व ऊंचा प्रतीत होता है, किसी का यह ख्याल है कि भाई जीवन की तो बात ही मत करो। वैसे जीवन के बारे में तो गुरू जी पहले ही बतला गए हैं -

धारना - दुखीआ सभ संसार,
नानक दुखीआ-नानक दुखीआ।

जितनी भी बड़ी-बड़ी हस्तियाँ हैं, भारतवर्ष की मशहूर हस्तियाँ हुई हैं, चाहे कोई हिन्दू है, चाहे कोई मुसलमान है, गुरू महाराज जी ने सबका जिक्र करके स्वर्ग के राजा इन्द्र से शुरू करके परशुराम जैसे ऋषि श्री रामचन्द्र जी, पांडव, रावण, जन्मेजेय, भृतहरि (भरथरी), गोपी चन्द राजा, पीरों, फकीरों आदि सबका जिक्र करते हुए कहा है -

बाली रोवै नाहि भतारु ॥
नानक दुखीआ सभु संसारु ॥ *अंग - 954*

अब इसमें हमारे लिए एक बहुत बड़ी समस्या आ गई है कि दुखों के संसार में जीकर हमने लेना क्या है? क्या कोई ऐसी जगह भी है, जहाँ पर कि हमें सुख की प्राप्ति हो सके? यह तो गुरू जी ने बहुत ही नकारात्मक बात कर दी है। गुरू जी तो संसार को गिरावट वाली तरफ ले गए हैं, जिन्हें समझ नहीं है, वे यही कहेंगे जो कि मैं इस समय कह रहा हूँ। जिन्हें हम लोग बुद्धिजीवी कहते हैं और संसार में उनका बहुत बड़ा

सम्मान भी है, वे इसी प्रकार की बातें करने लग पड़ते हैं। दरअस्ल वे बुद्धि की सीमाओं में ही बँधे रहते हैं और उन्हें पता ही नहीं चलता है कि बुद्धि से आगे भी कुछ होता है -

कहि कबीर बुधि हरि लई मेरी
बुधि बदली सिधि पाई ॥ *अंग - 339*

तिथै घड़ीऐ सुरति मति मनि बुधि ॥
तिथै घड़ीऐ सुरा सिधा की सुधि ॥ *अंग - 8*

आदमी के अन्दर ऐसी श्रेष्ठ मत भी है कि जिसके अन्दर बुद्धियाँ बिल्कुल ही निर्जीव प्रतीत होती हैं। अतः जो निर्जीव की सीमा में रहकर लिखता है, उसके वचन निर्जीव ही होते हैं और वह बुलन्दावस्था की बात को कैसे कह सकता है। अतः महाराज जी ने जिन्दगी का एक पक्ष दर्शाते हुए वचन कहा है कि यह जिन्दगी की एक कतार चली रही है, जिसमें भोगों की प्राप्तियों की बातें हैं। आप कहते हैं 'सहंसर दान दे इन्द्र रोआइआ।।' इन्द्र के पास क्या किसी धन-पदार्थ की कमी थी? ऋषियों-मुनियों का ऐसा मत है कि संसार के बादशाह की अपेक्षा इन्द्र के पास दस अरब गुणा अधिक सुख हैं। पारजात वृक्ष उसके बाग में है जिसे कि नन्दन बाग कहते हैं, कामधेनु गाय उसके पास है, जिसके पास जाकर चाहे कुछ भी मांग लो वही कुछ प्राप्त हो जाता है। पारजात वृक्ष के मण्डल मे जाकर कोई भी बात कह दो कि यह चीज चाहिए, वही चीज मिल जाएगी। जिसके पास ऐसा वृक्ष हो कि जिसके पास जाकर चाहे जो कुछ भी मांग लो, मिल जाए फिर कामधेनु गाय हो चिन्तामणि बटी हो, फिर उसके दुख का तो कोई सवाल ही नहीं रह जाता है। लेकिन फिर भी वह दुखी क्यों है? उसके वश में फिर मन क्यों न आ सका? अतः यहाँ पर यह पता लगता है कि यदि मन अपने वश में न हो तो चाहे दुनिया की कोई भी प्राप्ति क्यों न हो व्यक्ति को सुख में नहीं ले जा सकती है -

सहंसर दान दे इंदु रोआइआ ॥
परस रामु रोवै घरि आइआ ॥
अजै सु रोवै भीखिआ खाइ ॥
अैसी दरगह मिलै सजाइ ॥
रोवै रामु निकाला भइआ ॥
सीता लखमणु विछुड़ि गइआ ॥
रोवै दहसिरु लम्क गवाइ ॥
जिनि सीता आदी डउरु वाइ ॥
रोवहि पाँडह भए मजूर ॥
जिन कै सुआमी रहत हदूरि ॥
रोवै जनमेजा खुइ गइआ ॥
एकी कारणि पापी भइआ ॥
रोवहि सेख मसाइक पीर ॥
अंति कालि मतु लागै भीड़ ॥
रोवहि राजे कंन पड़ाइ ॥
घरि घरि मागहि भीखिआ जाइ ॥
रोवहि किरपन संचहि धनु जाइ ॥
पंडित रोवहि गिआनु गवाइ ॥
बाली रोवै नाहि भतारु ॥
नानक दुखीआ सभु संसारु ॥ *अंग - 954*

अब यह तो बहुत गलत बात हो गई है कि गुरू जी ने इस प्रकार की बात कह दी है कि सांसारिक बेशुमार प्राप्तियों वाला चाहे कोई भी व्यक्ति क्यों न हो वह दुखी अवश्य होगा। दूसरी लाइन यह है कि महाराज जी कहते हैं कि तुम लोग निराशावाद में मत आओ, देखो! कहीं मेरे वचनों को निराशावादी वचन मत समझ लेना। दरअस्ल मैंने तो तुम लोगों के सामने उन लोगों की एक तस्वीर रखी है जिन्होंने जो भी सुख मांगा उन्हें मिल गया लेकिन साथ में उन्हें दुख भी प्राप्त हो गया। इसलिए मैं तो उस सुख की बात करना चाहता हूँ जिसके मिलने से सारे ही दुख, सुखों में परिवर्तित हो जाएँ और दुख नाम की कोई चीज ही शेष न रहे। क्या ऐसा भी कोई रास्ता है? महाराज जी कहते हैं कि हाँ ऐसा सुन्दर रास्ता है लेकिन वह नाम के ऊपर विश्वास लाने से ही प्राप्त हो पाता है -

मंने नाउ सोई जिणि जाइ ॥
अउरी करम न लेखै लाइ ॥ *अंग - 954*

बाकी जी चीजें हैं वे सुख प्रदान नहीं करती हैं। उनके द्वारा व्यक्ति कभी भी सुखी नहीं हो पाता है और उनकी हालत नाम के मण्डल से बाहर होती है। परमेश्वर के प्यार से बाहर होती है। जिसका मन परमेश्वर के प्यार में रंगा हुआ नहीं है तो उसकी बाह्य प्राप्तियों को देखकर यह अनुमान मत लगाओ कि यह बहुत सुखी है, अपितु उसकी हालत तो बहुत ही नीची होती है। आप इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

धारना - विसटा के कीड़े जी,
सो प्रभ चित न आवई।

सुंदर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे ॥
ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे ॥
मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे ॥
सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे ॥
बिनु हरि नाम न साँति होइ कितु बिधि मनु धीरे ॥
अंग - 707

दुनिया की कोई भी ऐसी प्राप्ति न हो, कोई भी ऐसा रस न हो जो भोगा न जाता हो। हीरे तथा मोतियों के साथ जो भोगा न जाता हो। हीरे तथा मोतियों के साथ सोने की प्लेटों के साथ घर सजाया हुआ हो, दीवारें तथा दरवाजे झिलमिल-झिलमिल करते हों। जो भी ख्याल में आ जाए वही वस्तु या पदार्थ उसे प्राप्त हो लेकिन यदि उसके जीवन में अभी जीवन तरंग नहीं आ पाई है तो फिर -

सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे ॥

यदि वाहिगुरू को भूला हुआ है तो फिर तो कुछ भी नहीं है, फिर तो आहों के सिवाए उसके पास कुछ भी नहीं है। फिर तो बेशक उसके पास बेशुमार चीजें पड़ी हुई हैं लेकिन वह झुंझलाहट में ही रहेगा। खाने वाली चीजें पास में पड़ी हैं लेकिन अन्दर कोई रस नहीं है। बहुत सुन्दर पलंग है लेकिन जिन्दगी में कोई रस नहीं है, इसलिए यह कोई और चीज है, जिसके बारे में हमें कुछ पता ही नहीं है। महाराज जी कहते हैं कि वह नाम के मण्डल की जिन्दगी है। प्रेमीजनो! दुनियादारों को समझ ही नहीं आती है। हम कहते हैं कि 'नानक दुखीआ सभ संसार।।' गुरू जी तो उन लोगों की बात कर रहे हैं जो कि जिन्दगी के साथ से टूटकर मृत पदार्थों के साथ जुड़ा हुए हैं। दूसरे शब्दों में जो परमेश्वर के अस्तित्व से टूटकर माया के साथ जुड़ा हुआ है। माया तो अंधी है, जड़ है। जड़ की संगत तो जड़ ही बना डालती है। लेकिन जिनके अन्दर जिन्दगी का स्पर्श है, उनके अन्दर उल्लास ही उल्लास रहता है, भले ही उनकी बाहरी सांसारिक स्थिति चाहे जैसी भी हो लेकिन उनके अन्दर कोई ऐसी चीज अवश्य है, जिससे उनका प्यार का रंग नहीं उतरता है, जिन्दगी का उनका चाव मन्द नहीं पड़ता है और वे जिन्दगी को जीते हैं। उनके बारे में ऐसा फुरमान है -

बसता तूटी झुंपड़ी चीर सभि छिंना ॥
जाति न पति न आदरो उदिआन भ्रमिंना ॥
मित्र न इठ धन रुपहीण किछु साकु न सिंना ॥
राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना ॥
तिस की धूड़ि मनु उधरै प्रभु होइ सुप्रसंना ॥

अंग - *707*

कोई भी सांसारिक प्राप्ति नहीं है, फटे हुए वस्त्र धारण किए हुए हैं, टूटी हुई झोंपड़ी में रहता है। कोई जाति नहीं है, कोई पात नहीं है, कोई आदर देने वाला नहीं है और वह जंगलों में घूम रहा है, निर्जन स्थानों में घूम रहा है। उसका मित्र भी कोई नहीं है, रूपहीन है, सहारा भी कोई नहीं है, साक सम्बन्धी भी कोई नहीं है। लेकिन यदि उसके अन्दर जिन्दगी की रौ बह रही है, उसे लाल रंग लगा हुआ है तो फिर उसके बारे में गुरू जी कथन करते हैं 'राजा सगली .... मनु भिंना।।' यानि कि जिसका मन नाम में भीग गया है तो वह राजा है और उसका शरीर भी इतना पावन है कि उसकी चरण-रज से ही संसार का उद्धार हो सकता है यदि उसकी चरण-रज बड़े-बड़े तीर्थों में पड़ जाए तो उन तीर्थों की मैल दूर हो जाती है -

गंगा जमुना गोदावरी सरसुती
ते करहि उदमु धूरि साधू की ताई ॥
किलविख मैलु भरे परे हमरै विचि
हमरी मैलु साधू की धूरि गवाई ॥ ***अंग -*** *1263*

अतः ये दो प्रकार के जीवन हैं। एक जीवन में हम बाहर से रंग डालते हैं जो कि शीघ्रता से उतर जाते हैं क्योंकि यह रंगों का त्यौहार है लेकिन यदि अन्दर से रंग लग जाए तो फिर वह उतरा नहीं करता है फिर तो वह खुशवूदार रंग पूरी तरह से चढ़ जाता है, फिर खुशियां ही खुशियां छा जाती हैं। अब सवाल यह पैदा होता है कि श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जैसे रूहानियत की समझ प्रदान करने वाली महान हस्ती गुरू रूप वाणी हमारे पास मौजूद हो और उसे मानने वाले फिर दुखी हों, झुंझलाहट में हों, गिरती हुई निराशावादी अवस्था में हों, इसका क्या कारण है? ये क्यों लड़ते झगड़ते हैं? क्यों दूसरों पर अच्छा प्रभाव नहीं डाल पाते हैं? इसका कारण यह है कि उन्होंने गुरवाणी को विचारा नहीं है, वाणी पर अमल नहीं किया है। बाहरी तौर पर तो गुरवाणी के अनुसरणकर्ता प्रतीत होते हैं जबकि आन्तरिक तौर पर पूर्णतः खाली ही हैं। यदि अन्दर से उनके ऊपर गुरवाणी का प्रभाव हो फिर तो बात बन जाती है, अन्यथा खाली ही रहता है।

एक उदाहरण के माध्यम से बात समझ में आ जाएगी। अयोध्या का रहने वाला एक प्रेमी, जिसका नाम भाई भाना है, गुरू जी की चरण-शरण में आता है और आकर कहने लगा, महाराज जी! आपके गुरसिक्खों के माध्यम से जीवन का मनोरथ श्रवण किया है कि -

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥ 1 ॥
सरंजामि लागु भवजल तरन कै ॥
जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै ॥ ***अंग -*** *12*

महाराज जी! हमें समझ में नहीं आ रहा है कि जीवन मनोरथ को कैसे प्राप्त किया जाए और हम परमेश्वर के द्वार

तक किस प्रकार से पहुँच सकते हैं।

महाराज जी कहने लगे, भद्रपुरुष! व्यक्ति के अन्दर एक शक्ति है जिसे कि हम मन कहते हैं। यदि यह मन मित्र बन जाए फिर तो बड़े-बड़े काम करवा देता है और यदि यह न माने और अपनी मर्जियाँ करता घूमे, गलत बातों में ही व्यस्त रहे तो फिर इसके सदृश्य दुश्मन भी कोई नहीं है। फिर तो यह बड़ों-बड़ों को भी नीचे गिरा देता है, छोटों-छोटों की तो बात ही क्या है।

राजा भृतहरि, गोरखनाथ की शिक्षा के अनुसार राजभाग का परित्याग करके, अपनी रानियों को माताएँ कहकर और भिक्षा मांगकर संसार से उपराम हो गया। मन में बहुत अधिक लगन थी क्योंकि राजभाग का परित्याग किया था ताकि आगे कुछ प्राप्त हो सके। इसने सचमुच ही, रूहानी तरक्की के लिए कोशिशें करनी शुरू कर दीं। खूब मेहनत की, योग साधना की, जंगलों में रहना शुरू कर दिया जहाँ पर कि किसी व्यक्ति का दर्शन तक नहीं होता था। कलपाती वृत्ति धारण कर ली, न कोई कपड़ा पहनता है न कहीं मांगने जाता है, वृक्षों के नीचे जो भी मिल गया फलादि, कन्द मूल उसे ग्रहण कर लिया।

एक दिन की बात है कि ब्रह्ममुहुर्त है चाँद की चाँदनी है और उसकी निगाह एक जगह पड़ी। यह क्या देखता है कि एक बड़ा 'लाल' (अमूल्य रत्न) घास पर गिरा पड़ा है। उस समय मन में एकदम ख्याल आया कि यह लाल तो बहुत कीमती है। इस प्रकार का लाल तो मेरे खजाने में भी नहीं था। उसने उस लाल को उठाने के लिए जैसे ही हाथ लगाया तो हाथ में थूके हुए पान की पीक आ गई। उस समय उसे बहुत अधिक पाश्चाताप हुआ कि मैंने रानियाँ छोड़ दीं, भरे हुए खजाने छोड़ दिए। कपड़े त्याग दिए, राजभाग छोड़ दिए, खाना तक मैं कहीं पर खाने नहीं जाता हूँ। जंगल में जो कुछ मिल जाता है, मैं उसी को खा लेता हूँ। लेकिन यह दुश्मन तो मेरे अन्दर ही बैठा हुआ है। मैं तो समझता था कि मैंने इसे जीत लिया है लेकिन मैं तो इसे जीत ही नहीं सका हूँ। उस समय इसे अपने मन में बहुत अधिक अफसोस हुआ और वहाँ पर इसने एक श्लोक लिखा है -

मन रिप जिते सभ रिप जिते।

जब तक मन रूपी दुश्मन जीवित है तब तक सारे दुश्मन जीवित हैं और जब इस दुश्मन को जीत लिया तो समझो कि सभी दुश्मनों को जीत लिया है। 'मन रिप जीते सभ रिप जीते।' अतः महाराज जी कहते हैं कि ऐ प्रेमीपुरुष! यह मन रूपी instrument ऐसा इसके अन्दर बैठा हुआ है जो कि इसका सम्बन्ध संसार के साथ भी और निरंकार के साथ भी जोड़ने वाला है। यदि उसका रुख संसार की तरफ हो जाए फिर तो समझ लो कि दुख ही दुख है और यदि उसका रुख परमेश्वर की तरफ हो जाए फिर सारे सुख ही सुख उसे प्राप्त हो जाते हैं और यहीं बस नहीं बल्कि वह स्वयं परमेश्वर ही बन जाया करता है। बात इतनी ही समझने वाली है कि जो केन्द्र बिन्दु है, वह है - रुख। यदि रुख साईं की तरफ हो गया फिर साईं का रूप ही बन जाता है और यदि संसार की तरफ हो गया फिर पक्का दुनियादार बन गया। संसार के अन्दर तो प्राप्त करने के लिए कुछ भी नहीं होता है, शरीर के अन्दर भी उसे कुछ प्राप्त नहीं हो पाता है। उसमें तो दुखी ही रहता है। अतः यह मन की बात है यदि मन नियन्त्रण में आ जाए, शुद्ध हो जाए तो यह बड़ा मित्र है और यदि यह नियन्त्रण में नहीं है तो इससे बड़ा वैरी कोई नहीं है। गुरु जी इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

धारना - साध पिआरिआ! पहिलाँ मन आपणे नूं।

महाराज जी कहने लगे, भाई भाना! इस इन्सान के अन्दर जड़ और चेतन के बीच एक गाँठ है जिसे मन कहते हैं, यदि मन का रुख माया की तरफ हो जाए, फिर सारे दुख व उपद्रव, सारे घाटे, झुंझलाहट आदि सब कुछ इसके पल्ले पड़ जाते हैं। यदि इसका रुख माया की तरफ से हटकर परमेश्वर की तरफ हो जाए फिर तो यह परमेश्वर का रूप बन जाता है क्योंकि मन माया के साथ मिलकर माया का रूप बन जाता है और परमेश्वर के साथ मिलकर परमेश्वर का रूप बन जाता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि यह सतोगुण का अंश है। जिस प्रकार से पानी का अपना कोई रंग नहीं होता है, उसे जिस प्रकार के रंग के साथ मिला दो उसे वही रंग चढ़ जाता है जिस प्रकार के बर्तन में उसे डाल दो वह उसी प्रकार का दिखाई देने लग जाता है -

कबीर मनु पंखी भइओ उडि उडि दह दिस जाइ ॥
जो जैसी संगति मिलै सो तैसो फलु खाइ॥अंग-1369

जिस प्रकार की संगत में यह चला जाए उसी प्रकार के फल यह खाना शुरू कर देता है। चोरों में चला जाए तो चोर बन जाता है। डाकुओं में चला जाए तो डाकू बन जाता है, लोभियों में चला जाए तो लोभी बन जाता है। अहंकारियों की संगत कर लेगा तो अहंकारी बन जाएगा। शराबियों की संगत में बैठने लग गया तो शराबी बन जाएगा। अतः यह सारी माया की बात है। गुरू जी कहने लगे, देखो भाई भाना!

स्वाति बूँद कितनी पवित्र होती है लेकिन यदि वह पपीहे के मुख में चली जाए तो उसकी साल भर की प्यास को बुझा देती है और वह तृप्त हो जाता है। यदि केले में पड़ जाए तो उसके अन्दर कपूर पैदा हो जाता है। यदि साँप के मुख में पड़ जाए तो मोती बन जाता है। इसलिए यह जो मन है, इसे जैसी संगत वैसी रंगत।

इहु मनु सकती इहु मनु सीउ ॥ ***अंग - 342***

यदि यह अधोगामी (नीचे की तरफ रुख) हो गया फिर तो यह मन जड़ है और यदि यह ऊर्ध्वगामी (ऊपर की तरफ रुख) हो गया, वाहिगुरू की तरफ इसका रुख हो गया तो फिर यह परमेश्वर का रूप ही बन जाता है। फिर तो यह उनमन में (चौथे पद में) तीनों लोकों की बातें कहने में समर्थ हो जाता है, फिर तो यह भूत भी जानता है, भविष्य भी जानता है और वर्तमान भी जानता है। अतः मन को जैसा हम बना लें यह वैसा ही बन जाता है।

बाकी भाना दूसरी बात यह है कि जो यह संसार है, इसमें दो चीजें हैं। एक तो है परमेश्वर और दूसरी है परमेश्वर की बनाई हुई माया -

अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखनहारा ॥
नाना रुप धरे बहु रंगी सभ ते रहै निआरा ॥

अंग - 537

वाहिगुरू जी के बिना और कोई भी चीज जो तुम्हारे दिमाग में आती है, जिसे तुम देख सकते हो, सूंघ सकते हो, स्पर्श कर सकते हो, महसूस कर सकते हो, स्वाद ले सकते हो, अथवा अन्य किसी तरीके से तुम उसे जान सकते हो तो वह सब माया ही है। परमेश्वर जो है वह इस माया के पीछे है। अर्जुन को श्री कृष्ण महाराज जी कहने लगे, अर्जुन! मैं इस संसार को अपनी त्रिगुणी माया के पीछे बैठकर चला रहा हूँ और सारा संसार मेरी मर्जी के अनुसार चलता है लेकिन यह मूर्ख संसार इसे अपने सिर पर ले लेता है। यह मेरी माया का ही करिश्मा है कि मैं इसके पीछे बैठा हुआ किसी को दिखाई नहीं पड़ता हूँ हालांकि सब कुछ मैं ही कर रहा हूँ। मुझसे ही सब कुछ हो रहा है। यह माया जड़ रूप होने के कारण परमेश्वर का ज्ञान नहीं होने देती है।

अर्जुन कहने लगा, महाराज! यह सारी बात मेरी समझ से तो परे है, जिन्होंने आपको जान लिया है क्या वे भूल भी सकते हैं?

श्री कृष्ण महाराज जी कहने लगे, अर्जुन! वे अवश्य ही भूल सकते हैं, वे तो मेरा नाम तक भी भूल जाएँगे। दिमाग के अन्दर ही इतना फर्क आ जाएगा। माया वालों का भी दिमाग उसी तरह का है, जिस प्रकार का कि ब्रह्मज्ञानियों का है। उन्हें कुछ और दिखाई पड़ता है, दिमाग या सोच का ही अन्तर हुआ करता है। वह सोच दृढ़ हो जाने के कारण मन उस सोच को छोड़ नहीं पाता है।

मैं एक बार किसी रिश्तेदारी में चला गया वहाँ पर मैं घर से बाहर की तरफ को जा रहा था। उधर एक खिड़की में से मुझे एक आवाज आई कि तुम मेरे पास आओ, मैंने तुम्हें पहचान लिया है। मैं जब उसके नजदीक आने लगा तो वह ऐसी पोजीशन के साथ था कि मैं उसे हाथ नहीं लगा सकता था। मैं जाकर उसके पास खड़ा हो गया। वह कहने लगा तुम मुझे आकर मिलो। उसका नाम वतन सिंह था, उसका दिमाग हिल गया। वह कहने लगा, तुम यहाँ पर खड़े हो, क्या इस तरह से अच्छा लगता है? ये देखो, यहाँ कितने सोफे पड़े हुए हैं, कितनी कुर्सियाँ पड़ी हुई हैं। तुम इनके ऊपर बैठते क्यों नहीं हो?

मैं चुप करके खड़ा रहा क्योंकि वहाँ कौन सी कोई कुर्सी थी और कौन सा सोफा था। उसे तो बेचारे को स्वयं ही जंजीर से बाँधा हुआ था। वहाँ पर पास में ही एक मिट्टी का टिब्बा सा था, जहाँ पर से लोग मिट्टी वगैरह भर कर ले जाया करते थे, वहाँ पर एक व्यक्ति बैलगाड़ी लेकर मिट्टी भरने के लिए आ गया और उसने मिट्टी भरनी शुरू कर दी और वह उसे गालियाँ निकालने लग पड़ा। कहने लगा, तुम तो मेरे किले को ढाह रहे हो, मेरी रानियां अन्दर हैं। सिपाहियो! इसे पकड़ो और पकड़ कर मेरे पास लाओ। इसे मार डालो।

मैं देखकर हैरान हो गया कि देखो! कितना अच्छा व्यक्ति था लेकिन इसके मन में राजा का एक ख्याल आ गया और यह स्वयं को राजा ही समझ कर बैठा हुआ है। यह मिट्टी का ढेर इसे किला दिखाई पड़ रहा है और यह खाली जगह है लेकिन इसे सोफे व कुर्सियाँ दिखाई पड़ रही हैं। यह सब भ्रम ही तो है।

महाराज जी कहने लगे, यह सारा भ्रम ही हमें पड़ा हुआ है। हमारे ऊपर जो यह माया का प्रभाव पड़ा हुआ है, यही हमें असली चीज दिखाई नहीं देने देता है।

अर्जुन कहने लगा महाराज! मैं तो तुम्हें जानता हूँ, क्या मैं भी तुमसे दूर हो सकता हूँ?

महाराज जी कहने लगे, अर्जुन! तुम तो मेरा नाम भी नहीं सुनोगे जो व्यक्ति तुम्हारे पास आकर मेरा नाम भी लिया

करेगा तुम उसे भी मारने के लिए दौड़ा करोगे।

अर्जुन कहने लगा, महाराज ऐसी माया दिखा तो दीजिए?

श्री कृष्ण जी कहने लगे, तुमने क्या करना है दुखी होकर? दूसरे दिन उसने पुनः हठ किया। कहने लगा, महाराज! कल आपने माया की बात की थी लेकिन कृप्या आप दिखा तो दो कि उसका असर क्या है?

श्री कृष्ण महाराज जी कहने लगे अर्जुन! रहने दो तुम दुखी हो जाओगे।

जब अर्जुन माना ही नहीं तो आप कहने लगे, लो फिर मैं यहाँ पर रथ को खड़ा करता हूँ। तुम जाओ इस पास वाले सरोवर मे स्नान कर आओ। मैं यहीं पर बैठा हूँगा। मैं कहीं जाऊँगा नहीं। लेकिन मैं तुम्हें दिखाई नहीं पड़ूंगा। तुम रोओगे, पछताओगे और मुझे बिल्कुल ही भूल जाओगे। कहने लगा, महाराज यह कैसे हो सकता है?

हम लोग भी कह देते हैं कि हम कैसे भूल जाएंगे?

अर्जुन स्नान करने के लिए जिस समय सरोवर में घुसा उसके ऊपर माया पड़ गई, क्या देखता है कि वहाँ न कोई सरोवर है, न श्री कृष्ण महाराज जी हैं। वहाँ पर तो बहुत भयानक जंगल है और शेर चले आ रहे हैं, बड़ी-बड़ी सरालें चली आ रही हैं, वह उनके आगे-आगे दौड़ लिया। आवाजें लगाता है महाराज जी! आप कहाँ चले गए हो? कुछ भी पता नहीं लगता है कि महाराज जी कहाँ चले गए हैं। रात के समय वृक्षों पर चढ़ गया। तीन दिन व तीन रातें जंगल में ही घूमता रहा, आवाजें लगाता रहा। जब वह जंगल से बाहर निकला तो कोई प्रेमीपुरुष मिल गया। उसने पूछा कि क्या बात है? तुमने यह हालत क्यों बनाई हुई है? तुम्हारे सिर के बाल भी बिखरे पड़े हैं।

कहने लगा, प्रेमीपुरुष! मुझे इस प्रकार से बताओ कि हस्तिनापुर कहाँ है? मेरे साथ श्री कृष्ण महाराज जी आए थे, लेकिन अब वे मेरे साथ से बिछुड़ गए हैं।

वह कहने लगा, तुम पागलखाने से तो नहीं आए हो? कहने लगा, देखो! हमारा राजा कृष्ण भक्त है और श्री कृष्ण जी को परलोक सिधारे तीन सौ साल बीत चुके हैं और वर्तमान समय का राजा है - परीच्छत। अर्जुन का पड़पौत्र इस समय राजगद्दी पर बैठा हुआ है। तुम किस समय की बातें कर रहे हो?

कहने लगा, नहीं-नहीं मैं ही अर्जुन हूँ। वह व्यक्ति कहने लगा, देखो! मैंने तो सुन लिया है लेकिन और किसी से यह बात मत कह देना। बच्चे तुम्हें ईंट, रोड़े मारने लग पड़ेंगे। चलो मैं तुम्हें कथा सुनवा देता हूँ। वह व्यक्ति उसे धर्मशाला में ले गया। वहाँ पर पांडवों की कथा चल रही थी कि पांडवों ने महाभारत का युद्ध जीत लिया और कुछ देर तक राजभाग करने के बाद वे स्वयं पर्वत श्रृंखलाओं पर तपस्या करने के लिए चले गए और फिर बर्फ में उनका कुछ पता नहीं चला क्योंकि फिर वे वहाँ से लौटकर नहीं आए। उसके बाद उनका लड़का राजगद्दी पर बैठा, पौत्र बैठा, जिसे कि साँप ने मार दिया और जन्मेजेय ने साँपों का आवाहन किया जो कि कुष्ठ रोग से मर गया और अब उसका लड़का राज कर रहा है। अर्जुन ने बैठकर सारी कथा श्रवण की। कहने लगा, यह क्या हो रहा है? मैं जाग रहा हूँ या सो रहा हूँ?

उस समय वह पुरुष कहने लगा, देखो! अर्जुन! यहाँ कहीं गलती से भी स्वयं को अर्जुन न कह बैठना। अपना नाम परदेशी बताना। जब अन्य लोगों ने उसका नाम पूछा तो कहने लगा, मेरा नाम परदेशी है। अब वह अर्जुन से परदेशी बन गया। राजा के पास चला गया लेकिन जाकर कोई बात नहीं करता है। राजा ने देखा कि यह तो शूरवीर योद्धा प्रतीत होता है। राजा ने कई प्रकार से उसकी परीक्षा ली और अन्त में राजा की परीक्षा में सफल होने के कारण उसे सेना का कमांडर-इन-चीफ बना दिया गया। कुछ समय बीत जाने के बाद राजा ने अपनी लड़की की शादी उसके साथ कर दी। बहुत देर तक वह वहाँ पर सुखमय तरीके से रहता रहा। आखिर एक दिन इसकी घरवाली परलोक गमन कर गई। जब आस पड़ोस के लोग मिलकर उसका अन्तिम संस्कार करने लगे तो यह कहने लगा कि मैंने भी साथ में जाना है। भोगों के अन्दर इतना मस्त हुआ कि न कोई संध्या, न कोई गायत्री और न कोई नित्तनेम। विषय-विकारों में पड़ गया, नशों आदि में पड़ गया, शराबों-कवाबों में पड़ गया। यदि कोई व्यक्ति श्री कृष्ण महाराज जी का नाम भी लेता है तो यह दौड़कर उसे मारना चाहता है और कहता है कि खबरदार! यदि श्री कृष्ण का नाम भी मेरे पास लिया। अर्थात बिल्कुल ही उसका विपरीत निश्चय हो गया। जो राजा था वह श्री कृष्ण का भक्त था और जो उसका जरनैल है वह श्री कृष्ण के खिलाफ हो गया। वह राजा के भी दोष निकालता है और श्री कृष्ण के भी दोष निकालता है। जो निन्दा करने वाला होता है, उसका स्वभाव ही दोष निकालना होता है। कोई न कोई दोष उसे मिल ही जाता है और अपने मन के अनुसार वह अर्थ निकालता रहता है।

आखिर जब वह नहीं माना और कहता ही गया कि मैंने तो इसके साथ ही चिता में जल जाना है। उस समय ब्राह्मणों ने कहा कि अच्छा यदि तुमने नहीं मानना है और जलना ही है तो फिर तुम जाओ सरोवर में स्नान कर आओ। जब स्नान करने गया और एक डुबकी सरोवर में लगाई तो क्या देखता है कि न तो वहाँ पर कोई श्मशान भूमि है, न कोई ब्राह्मण है, वह चारों तरफ देख रहा है कि यह सब क्या हो रहा है? वहाँ पर पास में ही श्री कृष्ण महाराज जी बैठे हुए हैं। वे हँस रहे हैं। कहने लगे, अर्जुन! स्नान कर लिया? आओ हमारे पास आ जाओ।

कहने लगा, कौन सा अर्जुन?

श्री कृष्ण जी - तुम अर्जुन नहीं हो?

वह कहने लगा, मैं तो परेदशी हूँ।

श्री कृष्ण महाराज जी ने ऊधव को भेजा कि जाकर इसे समझाओ। अर्जुन, ऊधव को कहने लगा, तुम कौन से युग की बातें कर रहे हो? श्री कृष्ण महाराज जी को तो परलोक सिधारे तीन सौ साल बीत चुके हैं, यह तो कोई पाखण्डी बैठा हुआ है। इसने उसका रूप धारण किया है। मैं श्री कृष्ण महाराज जी को नहीं जानता हूँ। मेरी तो घरवाली परलोक गमन कर गई है। वह कहने लगा तुम्हारी घरवाली तो है ही नहीं। यह तो तुम्हारे ऊपर माया डाली हुई है।

अब उसे समझ में नहीं आ रहा है। आखिर में श्री कृष्ण महाराज जी उठे और उन्होंने हल्का सा तीन अंगुलियों वाला मुँह पर थप्पड़ सा मारा और सारी माया उतार दी।

कहने लगे क्यों भाई अर्जुन? कहने लगा, जी मेरी घरवाली?

महाराज जी कहने लगे, तेरी घरवाली? वह तो तुम्हारे ऊपर माया डाली हुई थी। न वह कोई जगह है न कोई जंगल है। तुम कहाँ गए थे? तुम तो स्नान करने के लिए गए थे, मैंने तुम्हें कहा था जाओ, डुबकी मार कर स्नान करके आ जाओ, इतना ही समय तो अभी हुआ है।

अतः यह परमेश्वर की माया आश्चर्यजनक है, इसके बारे में कोई कह नहीं सकता है। यह अनिर्वचनीय है। साधू इसके बारे में कहते-कहते चुप कर जाते हैं कि इसके बारे में, या इसे, क्या कहा जाए?

अतः महाराज जी कहते हैं कि यह जो माया है इसका जबरदस्त प्रभाव व्यक्ति पर है -

धारना - इस माइआ मोहणी मोहणी ने।
विणु दंता जग खाइआ।

माइआ ममता मोहणी जिनि विणु दंता जगु खाइआ॥
मनमुख खाधे गुरमुखि उबरे जिनी सचि नामि चितु लाइआ ॥
बिनु नावै जगु कमला फिरै गुरमुखि नदरी आइआ ॥
अंग - 644

कहते हैं कि गुरू जी ने देख लिया है कि संसार तो पागल हुआ घूम रहा है और एक जगह पर तो महाराज जी ने ऐसे भी फुरमान किया है -

बिनु सबदै सभु जगु बउराना बिरथा जनमु गवाइआ॥
अंग - 644

पागल होकर संसार घूम रहा है, कोई अमन नहीं है, कोई चैन नहीं है, एक दूसरे के साथ कोई प्यार नहीं है, समझ नहीं है। दूसरे के धन को हासिल करने के लिए बड़े से बड़ा पाप करने के लिए भी यह व्यक्ति तैयार हो जाता है, कोई मान मर्यादा का भी ख्याल नहीं रखता है। माया का कोई एक रूप नहीं है, बल्कि इसके तो असंख्य रूप हैं। जो भी कुछ तुम देख रहे हो वे सब माया के रूप हैं। कहीं पर पुत्र बनकर माया मोह रही है, कहीं स्त्री बनकर मोह रही है, कहीं धन-माया बनकर मोह रही है। कहीं पर पद या प्रतिष्ठा बनकर माया मोह रही है। परमेश्वर ने हमारे अन्दर जितने जज्बे उत्पन्न किए हैं, उन सबके रूप में माया मोह रही है। कहीं दुश्मन होकर माया मोह रही है। किसी जगह पर कोई भाव है और कहीं पर कोई अन्य भाव है। गुरू जी कहते हैं कि यह तो माया ने सब कुछ घेर रखा है और गुरू जी माया की सर्प से तुलना करते हुए कहते हैं -

माइआ भुइअंगमु सरपु है जगु घेरिआ बिखु माइ ॥
अंग - 1415

भुइअगंम कहते हैं फनधारी शक्तिशाली सर्प को। इसके अन्दर बहुत अधिक जहर होती है, यह मुँह के अन्दर से बहुत अधिक विष निकाल कर बार-बार गिराता रहता है, ऐसे माया रूपी सर्प ने चारों तरफ से घेर लिया है। अब दिक्कत यह है कि किया क्या जाए? क्योंकि इस प्रकार के संसार में हम लोग रह रहे हैं। गुरू जी कहते हैं कि ऐ प्रेमीजनो! हम तुम लोगों को एक ऐसी बटी देते हैं कि जिसके माध्यम से तुम्हें इसकी विष नहीं चढ़ेगी और बल्कि चढ़ी हुई जहर भी उतर जाएगी। आप कहते हैं कि -

बिखु का मारणु हरि नामु है
गुर गरूड़ सबदु मुखि पाइ॥ ***अंग - 1415***

यदि नाम मिल जाए तो विष समाप्त हो जाता है। जब हम गुरू के शब्द को मुंह में डाल लेते हैं यानि कि हम गुरू से शब्द लेकर वाहिगुरू-वाहिगुरू, राम-राम, अल्लाह-अल्लाह करने लगते हैं तो फिर माया मर जाती है लेकिन यह प्रत्येक के हिस्से में नहीं आता है -

जिन कउ पूरबि लिखिआ
तिन सतिगुरू मिलिआ आइ ॥ ***अंग - 1415***

प्रत्येक को तो सतगुरू नहीं मिल पाया करता है, यदि कहता है कि जी! मैंने अमृतपान कर लिया है तो केवल अमृतपान करने से बात नहीं बन पाया करती है। अमृतपान करने के समय पाँच प्यारे एक शब्द देते हैं, मन्त्र देते हैं, उस मन्त्र का जो जप है उसके बारे में महाराज जी ने इस प्रकार से फुरमान किया है -

धारना - हउमै नूं खोईदै, वाहिगुरू मंत्र जपु के।

वाहिगुरू गुरमंत्र है जपु हउमै खोई॥भाई गुरदास जी

ये मन्त्र पाँच प्यारों ने दे दिया। आगे शर्त है कि इसे जपो, इसे कमाओ, इन्हें समझने का यत्न करो। इसे हृदय में बसाओ। इसके जरिए उस अमृत तक पहुँचो जिसे कि परमेश्वर ने प्रत्येक के अन्दर रखा हुआ है और जिसे कि हम वास्तविक अर्थों में अमृत कहते हैं। अमृत बाहरी भी जरूरी है और आन्तरिक भी जरूरी है। बाहर वाला क्यों जरूरी है? यह हम लोगों ने ट्यूबवेल लगाया है, 600 फुट हमने बोर किया है और इसके अन्दर पानी भी बेशुमार है। लेकिन इसके अन्दर **reflex valve** फिट किया हुआ है। अब बटन दबा दिया गया है, लेकिन पानी नहीं आ रहा है। मोटर भी चल रही है, सब कुछ हो रहा है लेकिन पानी नहीं आ रहा है। दरअस्ल उसके अन्दर हवा भरी हुई है और उसे तभी बाहर निकाला जा सकता है जबकि बाहर से पानी डाला जाए। जब हम ऊपर से पानी डालते हैं और मोटर का बटन दबाते हैं तो पानी (नीचे वाला) ऊपर आ जाता है और वह **reflex valve** के साथ लग जाता है। अब, जब बटन दबाएंगे तो पानी तुरन्त ही चल पड़ेगा। अब न तो बाहर वाला पानी समाप्त होगा और न ही अन्दर वाला नीचे जाएगा। अतः यह एक उदाहरण है। दरअस्ल हमारे अन्दर अमृत है और हम बोरिंग करके वहाँ तक पहुँच भी गए हैं। अब उस अमृत को बाहर निकालने के लिए हमें बाहर से अमृत डालना पड़ेगा। पाँच प्यारे जब अमृतपान करवाते हैं तो वे गुरू का मन्त्र रूपी शब्द देते हैं। उसे जपते-जपते हउमै रूपी हवा अन्दर से निकल जाती है, फलस्वरूप अमृत तक पहुँच बन जाती है, जिस अमृत के बारे में गुरवाणी का कथन है -

सुरि नर मुनि जन अंम्रितु खोजदे
सु अंम्रितु गुर ते पाइआ ॥ ***अंग - 918***

देवी-देवते व सिद्ध-साधक सारे ही इस अमृत को खोजते हैं लेकिन यह मिलता नहीं है। बड़े-बड़े बादशाह भी इसे खोजते रहे हैं। सिकन्दर की मिसाल देते हैं। कोहकाब के ऊपर अमृत के चश्मे के बारे में उसे पता चला लेकिन वह उसे पी नहीं सका। महाराज जी कहते हैं वह कोहकाब तो तुम्हारे अन्दर ही है, वह कहीं बाहर नहीं है। इसके लिए तुम वैसे ही भ्रम में मत आओ -

घर ही महि अंम्रितु भरपूरू है
मनमुखा सादु न पाइआ॥
जिउ कसतूरी मिरगु न जाणै भ्रमदा भरमि भुलाइआ॥
अंम्रितु तजि बिखु संग्रहै करतै आपि खुआइआ ॥
अंग - 644

यह प्रायः जहर ही इकट्ठी करता जाता है और अमृत की तरफ तो यह जाता ही नहीं है जबकि अमृत का चश्मा तो तुम्हारे अन्दर ही लबालब भरा पड़ा है -

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥
देही महि इस का बिस्रामु ॥
सुंन समाधि अनहत तह नाद ॥
कहनु न जाई अचरज बिसमाद ॥ ***अंग - 293***

उस कोहकाब की निशानी भी महाराज ने बता दी है कि वहाँ पर बिल्कुल शान्ति है और वहाँ पर आनन्द के इतने हुलारे बजते हैं, जिसे कि बताया ही नहीं जा सकता है। रंग चढ़ जाता है, जब वह अमृत के कुण्ड के पास पहुँचता है। अतः कहते हैं कि यह जो अमृत है इसे नाम कहते हैं -

धारना - सुण मेरे मना अंम्रित हरि हरि नाम है।

अंम्रितु हरि हरि नामु है मेरी जिंदुड़ीए
अंम्रितु गुरमति पाए राम ॥ ***अंग - 538***

नाम गुरू से प्राप्त होता है उसकी मति धारण करने से प्राप्त होता है लेकिन गुरू कैसे मिलता है -

जिन कउ पूरबि लिखिआ
तिन सतिगुरू मिलिआ आइ॥
मिलि सतिगुर निरमलु होइआ
बिखु हउमै गइआ बिलाइ ॥ ***अंग - 1415***

जब वह अमृत मिल गया तो हउमै की विष उसी समय उतर गई -

हउमै माइआ बिखु है मेरी जिंदुड़ीए
हरि अंम्रिति बिखु लहि जाए राम ॥ ***अंग - 538***

अतः इस प्रकार से कहने लगे, भाई भाना! यह जो माया की मैल लगी हुई है, जब तक यह नहीं उतरती है, तब तक बात नहीं बन पाया करती है। यह व्यक्ति माया के अधीन दुखी हो रहा है, वह सुखी हो ही नहीं पाता है, उसे नाम का रंग चढ़ ही नहीं पाता है। नाम का रंग तो तभी चढ़ पाता है जबकि माया का रंग उतर जाए। भाई भाना कहने लगा, महाराज जी! इसका मतलब तो यह है कि माया बहुत ही खराब चीज है? इसका प्रयोग भी बहुत बुरा है। महाराज जी कहने लगे, माया बुरी नहीं है बल्कि इसका प्रयोग करने का ढंग बुरा है। जो माया का सही प्रयोग करना जानता है, उसके लिए माया बुरी नहीं है, लेकिन जो इसके अन्दर ही खपने लगता है, उसे तो फिर यह मजा चखा देती है। जो इसकी तरफ पीठ कर लेता है, तो फिर यह उसके पीछे-पीछे घूमने लग जाती है। ऐसा फुरमान है -

धारना - दासी हो के कार कमावे,
माइआ साधूआँ दी।

कहने लगे इसने सारी दुनिया को जीत लिया है -

माया के बल को देख कर बड़े-बड़े विद्वान, बड़े-बड़े योगी, बड़े-बड़े शास्त्र वेत्ता, बड़े-बड़े मुनि, तीन मुखी देवता (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) व तैंतीस करोड़ देवता भी हैरान रह गए हैं -

मुनि जोगी सासत्रगि कहावत सभ कीने बसि अपनही॥
तीनि देव अरू कोड़ि तेतीसा तिन की हैरति कछु न रही॥ ***अंग - 499***

सारे माया की शक्ति को देखकर आश्चर्यचकित रह गए -

बलवंति बिआपि रही सभ मही ॥
अवरू न जानसि कोउ मरमा गुर किरपा ते लही ॥
अंग - 499

इसे उतारने का अन्य कोई तरीका नहीं है, बस यदि गुरू की कृपा हो जाए तो यह उतर जाती है। अन्यथा यह उतरती नहीं है। इसने तो सारे धर्म, सारे तीर्थ जीत लिए हैं, सारी मस्जिदें जीत ली हैं, सारे मन्दिर जीत लिए हैं, प्रत्येक जगह इसी का बोलबाला है। इसने तो धर्म स्थानों पर भी अपने एजेंट लाकर खड़े कर दिए हैं -

जीति जीति जीते सभि थाना सगल भवन लपटही ॥
अंग - 499

धर्म स्थानों को भी इसने अपने लपेटे में ले रखा है, सब जगह इसने अपना प्रभाव डाल रखा है -

कहु नानक साध ते भागी होइ चेरी चरन गही ॥
अंग - 499

चरणों की दासी बनकर चरण पकड़कर कहती है कि मुझसे सेवा लो। साधू धक्के मारते हैं और माया विनतियाँ करती हैं। अतः महाराज जी कहने लगे, प्रेमीपुरुष! यह जो संसार में माया का खेल चल रहा है, इसे समझने की जरूरत है। मन जो बेकाबू हुआ है, इसे सुधारने की जरूरत है।

भाई भाना जी को नाम की दात प्रदान की और नाम की समझ दी क्योंकि नाम तो हम लोग जपते रहते हैं, हम सभी वाहिगुरू-वाहिगुरू करते रहते हैं, लेकिन महाराज जी कहते हैं कि प्रेमीजनो! इसे भी समझने की जरूरत है -

राम राम सभु को कहै कहिऐ रामु न होइ ॥
गुर परसादी रामु मनि वसै ता फलु पावै कोइ ॥
अंग - 491

राम राम तो सभी कहते हैं लेकिन -

कबीर राम कहन महि भेदु है ता महि एकु बिचारू॥
सोई रामु सभै कहहि सोई कउतकहार ॥
अंग - 1374

राम-राम तो सभी कहते हैं लेकिन इसमें एक रहस्यात्मक बात भी है। दरअस्ल बात यह है कि हमें उस रहस्य का पता नहीं चलता है, युक्ति का पता नहीं चलता है और युक्ति के बिना बात नहीं बनती है। अब मान लो यह वी.सी.आर. ही है, यदि इसकी एक तार भी इधर उधर हो जाए तो इसमें व्यक्ति की तस्वीर आती ही नहीं है। इसी प्रकार से टैलीविजन में एकाध तार गलत लग जाए तो उसमें तस्वीर आती ही नहीं है। इसी प्रकार से जो वाहिगुरू कहना है, उसे समझ कर कहो कि वह क्या है? पहले उसके ऊपर विश्वास लाओ, विश्वास के बिना वाहिगुरू किसे कहोगे? क्या खाली आसमान को आवाजें लगाओगे? जब तक उसकी हस्ती पर यकीन नहीं आता है, तब तक उसका पता नहीं चलता है, उसके गुणों के बारे में मूलमन्त्र में लिखा हुआ है -

ੴ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरू
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥
॥ जपु ॥
आदि सचु जुगादि सचु ॥
है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥1॥

'चलता'

बाबाणियाँ कहानियाँ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, अंग - 22)

मन का दूसरा भाग जिसे अर्ध चेतन कहते हैं, वह अवस्था होती है जिसमें मन की वासनाएं, फुरने रुक जायें तथा नाम रस में मन की चेतनता लीन हो जाये। उस समय उसे संसार भूल जाने के कारण अर्ध चेतन मन कहा जाता है। मन का तीसरा भाग प्रभु के साथ जुड़ा रहता है। मन को दिखाई देने वाला संसार प्रभु रूप होकर दिखाई देता है। सत्य का प्रत्यक्ष अनुभव उस अवस्था में जागता है। माया की एक एक तार को आपा चीन कर खत्म कर देता है। वह सदा जागने वाला मन हुआ करता है इस प्रकार शरीर तो सोता है पर जो आत्मिक सुरति है वह नहीं सोया करती। यदि कोई कहे कि सभी कुछ आदमी के **brain** (दिमाग) में ही घटित होता है तो यह भी ठीक नहीं क्योंकि जीव शरीर नहीं है। शरीर में बसने वाला अज्ञान का लपेटा हुआ चेतन बिम्ब है, चेतन तत्व नहीं है, उसकी परछाई है। पर यह मन जब उनमनी अवस्था में बदल जाता है तो यह दिमाग से ऊपर उस प्रकार काम करता है जैसे शरीर छोड़ने के बाद जीव को ज्ञान होता है, उसका अस्तित्व समाप्त नहीं हुआ करता सांसारिक सुरत उसकी मर जाती है पर याददाश्त में पड़े प्रभाव नहीं मरा करते। अच्छे-बुरे प्रभाव लेकर वह दरगाह में जाता है जब जीव अपने ज्योति स्वरूप को (ज्ञान स्वरूप) को अपना आपा मान लेता है तो इस ज्ञान को कभी सासांरिक नींद नहीं आया करती। यह सदा ही जागने वाला तत्व है, न वाहिगुरू जी को नींद आती है, न आत्मा को नींद आती है, क्योंकि आत्मा परमात्मा एक ही रूप हैं। दोनों का ज्ञान पूर्ण है। यह ज्ञान भी उस ज्ञान का अटूट अंग है, इस बात को समझने के लिये कठिन परिश्रम करना पड़ता है। अनवरत नाम लिव प्राप्त होने से सहज समाधि लग जाती है और सदा ही जाग प्राप्त हो जाती है। यदि कोई विचार करे कि नींद के बिना शरीर हृष्ट-पुष्ट नहीं रहता उसकी यह बात भी ठुकराई नहीं जाती। पर जैसा कि मैंने पहले बताया है कि आदमी के अन्दर सुरति के उच्च दर्जे हैं। जब कोई सुरत नाम ऊर्जा के मण्डल में पहुँच प्राप्त कर लेती है तो वह नाम ऊर्जा जिसके बारे में गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया है -

हरि अउखधु सभ घट है भाई। गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई।
गुरि पूरै संजमु करि दीआ। नानक तउ फिरि दूख न थीआ॥ *अंग - 259*

तथा सुखमनी साहिब में फ़रमान करते हैं -

सरब रोग का अउखदु नामु। *अंग - 274*

इस शरीर को स्वस्थ रखती है जिस शरीर में नाम ऊर्जा कम हो जाती है वह सैकड़ों, हज़ारों दवाईयों का प्रयोग करने के बाद भी स्वस्थ नहीं रह सकता क्योंकि उस नाम धारा (**Current**) से टूट कर शरीर के अन्दर से ताज़गी की लहर आनी बन्द हो जाती है। जो शरीर के एक एक सैल को जीवन प्रदान करती थी जब उस करंट से जीव दूर है तो रोग शरीर को ग्रस लेता है जैसा कि फ़रमान है -

खसमु विसारि कीए रस भोग।
तां तनि उठि खलोए रोग॥ *अंग - 1256*

परमेसर ते भुलिआं विआपनि सभे रोग।
अंग - 135

अतः इसलिये उपरोक्त सिद्धान्त को समझाने के लिये नाम की कमाई करने की अति आवश्यकता है।

सो मैं राड़ा साहिब वाले महापुरुषों की बात कर रहा था उन्होंने बताया कि जब सदीवी जाग की अवस्था प्राप्त हुई उस समय सदीवी जाग का अनुभव किया। हम माया के कुठे हुये जीव हैं हम ब्रह्म वेत्ताओं के बारे में कोई अनुमान नहीं लगा सकते। सन्त महाराज जी ने जो कठिन परिश्रम राड़े साहिब में किया उसके बारे में कुछ कहना कठिन ही है क्योंकि महापुरुष वाहिगुरू के निकट होते हुये भी कोई भेद नहीं दिया करते-

सबर अंदरि साबरी तनु एवै जालेन्हि।
होनि नजीकि खुदाइ दै भेतु न किसै देनि॥

अंग - 1384

इस तरह सन्त महाराज जी कहने लगे कि सन्तों का जो जीवन है उसे सन्त स्वयं इसलिये नहीं लिखते क्योंकि इनमें गुप्त गूढ़ भेद होते है जो अनाधिकारियों के हाथों नहीं जाने चाहिए। दूसरा वे अपनी अवस्था को स्वयं नशर (वर्णन) नहीं करते।

दूसरे व्यक्ति जब महापुरुषों का जीवन लिखते हैं तो वे भी ठीक तरह नहीं लिख सकते। दूसरे को यह पता नहीं चलता कि सन्तों के शरीर के अन्दर कमल उलट कर कब अमृत से भर जाया करता है तथा उस अमृत का क्या स्वाद होता है, वह अमृत रस कैसा होता है, वह शरीर को कैसे आनन्द प्रदान करता है और शरीर में कैसे ताज़गी कायम रहती है उसका प्रभाव शरीर को एक रस रहने के लिये कैसे प्रयोग करता है, नाम निवास के न नष्ट होने वाले प्रभाव को कैसे जज़ब करता है क्योंकि पहले बताया जा चुका है कि कई बार नाम का इतना प्रबल प्रवाह शरीर के अन्दर चलता है कि वह शरीर को **Weightless** (भार रहित) कर देता है, गुरुन्त्व **Gravity** का सम्बंध शरीर से अलग कर देता है। शरीर ऊचां उड़ जाया करता है। एक वार्ता मुझे किसी महापुरुष ने बताई कि एक बीबी अमृत बेला में स्नान करके सुमिरन में बैठ जाया करती थी। उसकी अवस्था उच्च हो गई, उसकी सुरत नाम मण्डल में प्रवेश कर गई। नाम मण्डल का शक्तिशाली वेग उसे उठाकर दूर खेतों में ले गया तथा वह सहज ही नीचे फसल में उतर आई। वहाँ जो प्रेमी अपने खेत को पानी लगा रहा था वह इस कौतुक को देख कर डर गया, पर हिम्मत करके पूछा कि भाई! तू कौन है। भूत प्रेत वाला डर तो तेरे से मुझे नहीं लगा, कुछ आनन्द मैंने भी महसूस किया है, तू जरूर कोई अच्छी रूह है कोई परमात्मा का करिश्मा हुआ है इतना तो बता दे तू कौन है? उस समय उस वजूद में से आवाज़ आई कि भाई! मुझे यह बता कि मैं कहाँ पहुँच गई और यहाँ कैसे आई? उसने बताया कि यह हमारे खेत है, मैं इस गाँव का रहने वाला हूँ। आपका शरीर हवा में उड़ता धीरे-धीरे आ रहा था और यहाँ फसल में आकर टिक गया। उसने अपना परिचय दिया उस प्रेमी ने उसकी मदद कर उसके घर पहुँचा दिया। आम मनुष्यों को इसका ज्ञान नहीं होता कि यह घटना कैसे घटित हुई पर नाम की कठिन कमाई करने वालों को पता है कि जब नाम ऊर्जा में सुरत पूरी तरह प्रवेश कर जाये तो ऐसी घटनाये प्रायः घटित हो जाया करती हैं। जिसके अन्दर नाम की शक्ति पैदा हो जाये उसका ओरा (शक्ति घेरा) दूर तक फैल जाता है, उसे पानी डूबो नहीं सकता, आग उसे जला नहीं सकती, कोई शास्त्र उसे काट नहीं सकता। प्रहलाद के बारे में सभी जानते हैं, भाई गुरदास जी ने फ़रमान किया है-

घरि हरणाखस दैत दे कलरि कवलु भगतु प्रहिलादु।
पढ़न पठाइआ चाटसाल पाँधे चिति होआ अहिलादु।
सिमरै मन विचि राम नाम गावै सबदु अनाहदु नादु।
भगति करनि सभ चाटड़ै पाँधे होइ रहे विसमादु।
राजे पासि रूआइआ दोखी दैति वधाइआ वादु।
जल अगनी विचि घतिआ जलै न डुबै गुर परसादि।
कढि खड़गु सदि पुछिआ कउणु सु तेरा है उसतादु।
थंम्हु पाड़ि परगटिआ नरसिंघ रूप अनूप अनादि।
भाई गुरदास जी, वार 10/2

और गुरबाणी में इस घटना का संकेत देते हुये गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया है कि -

दुसट सभा मिलि मंतर उपाइआ करसह अउध घनेरी।
गिरि तर जल जुआला भै राखिओ राजा रामि माइआ फेरी॥
अंग - 1165

प्रकृति का स्वभाव भी नाम शक्ति के आगे टिक न सका। इसी प्रकार की और घटना गुरू ग्रन्थ साहिब जी महाराज में आती है कि कबीर साहिब के खिलाफ मनमुखों ने बहुत चुगलियां की जिनमें द्वैष से भरे हुये बनावटी पंडित भी थे तथा काज़ी और मौलवी भी थे। उन्होंने बादशाह से कहा कि काशी में ऐसा काफ़िर पैदा हुआ है जो किसी धर्म की मर्यादा को, नियमावली, शरां, शरीअत को नहीं मानता। वह हिन्दुओं के धर्म में भी दखल देता है और इस्लाम की भी तौहीन करता है। वह कहता है कि हिन्दू और तुर्क कहां से आ गये? किसने ये दो रास्ते चला दिये? हे बुरी तरह से झगड़ने वालो, वाद विवाद करने वालो! तुम यह तो बताओ कि स्वर्ग और नरक किसको मिलता है? काजियों की ओर संकेत करके कहता है कि ऐ काज़ी! तूने कौन सी पुस्तक पढ़ी है, कौन सी पुस्तक में यह वचन लिखा है और तूने कौन सी पुस्तक पढ़कर विचार दिये हैं? तेरे जैसों को इन किताबों ने बर्बाद कर दिया है तथा दरगाह में तुझे बेइज्ज़त होना पड़ेगा। तुम सुन्नत की बात करते हो यह हज़रत ने अपनी

पत्नी साहरा के गुस्से को दूर करने के लिये सुन्नत करवाई थी क्योंकि वह अपनी दूसरी पत्नी हाज़िरा के साथ संग कर बैठा था। हज़रत इब्राहिम ने अपनी नई पत्नी साहरा को वचन दिया था कि मेरा सिर्फ तेरे साथ प्यार है यदि मैं किसी और के साथ प्यार करूँ तो तू मेरे सारे अंग काट सकती है जो उसे स्पर्श करेगें। सो साहरा ने उसकी सजा को कम कर दिया। मूछों की अपेक्षा छाती में से बाल काट दिये तथा सुन्नत कर दी। पर तू बता यह तो एक सजा के तौर पर की गई वार्ता है जो प्यार के वशीभूत होकर की गई। मुझे इस सारी वास्तविकता का पता है, मैं क्यों अपनी सुन्नत करवाऊँ, इसमें कौन सा रूहानी भेद छिपा है। अच्छा, भला! यदि खुदा ने सुन्नत करके मुझे तुरक बनाना था तो मेरी सुन्नत पहले से ही की हुई होनी चाहिये थी। यदि भला कोई सुन्नत करने से तुरक बनता है तो यह बता वह अपनी स्त्री की सुन्नत कैसे करेगा, वह तो फिर हिन्दू ही रही और फिर सलाह देता है कि क्यों शुदाई (पागल) हुये हो, असल बात तो यह है कि खुदा की बन्दगी करो, नफरत (घृणा) पर काबू पाओ और अल्लाह का नाम जप कर अल्लाह में अभेद हो जाओ, ये तुम्हारी शरों (नियमावली) की बातें मैं नहीं मानता। इसी तरह वह ब्राह्मणों को ललकारता है कि तू अपने आपको ब्राह्मण कहता है तो तू मेरी तरह क्यों पैदा हुआ। जिस स्थान से मैं पैदा हुआ वहीं से तू पैदा हुआ है। तू मुझे यह बता कि तेरे खून की जगह क्या दूध बह रहा है? तेरे अन्दर भी वही खून है, वही स्वभाव है फिर तू उच्च कैसे हो गया? पूरा शब्द इस प्रकार है -

हिंदू तुरक कहा ते आए किनि एह राह चलाई।
दिल महि सोचि बिचारि कवादे भिसत दोजक किनि पाई॥
काजी तै कवन कतेब बखानी।
पढ़त गुनत ऐसे सभ मारे किनहूं खबरि न जानी॥
सकति सनेहु करि सुंनति करीऐ मै न बदउगा भाई।
जउ रे खुदाइ मोहि तुरकु करैगा आपन ही कटि जाई॥
सुंनति कीए तुरकु जे होइगा अउरत का किआ करीऐ।
अरध सरीरी नारि न छोडै ता ते हिंदू ही रहीऐ॥
छाडि कतेब राम भजु बउरे जुलम करत है भारी।
कबीरै पकरी टेक राम की तुरक रहे पचि हारी॥
अंग - 477

गरभ वास महि कुलु नही जाती।
ब्रहम बिंदु ते सभ उतपाती॥
कहु रे पंडित बामन कब के हुए।
बामन कहि कहि जनमु मत खोए॥
जौ तूं ब्राहमणु ब्रहमणी जाइआ।
तउ आन बाट काहे नही आइआ॥
तुम कत ब्राहमण हम कत सूद।
हम कत लोहू तुम कत दूध॥
कहु कबीर जो ब्रहमु बीचारै।
सो ब्राहमणु कहीअतु है हमारै॥ *अंग - 324*

दोनों मज़हबों के प्रेमी दिल्ली के बादशाह के सामने, जब वह अपने दौरे पर काशी आया था, मिलकर शिकायत कर रहे थे। उस समय बादशाह ने सजा सुना दी कि इस काफिर को, जो संसार में कुफ्र फैला रहा है पानी में डुबो कर मार दो तथा इसे पत्थर तथा भारी जंज़ीरों से लपेट कर गंगा में डुबो दिया गया। सभी लोग खड़े होकर इस दृश्य को देख रहे थे तथा मन ही मन प्रार्थनाएं कर रहे थे कि हे प्रभु! इस महान भक्त को ये लोग कट्टरवाद की शरो और शरीअत में फंसे हुये काफ़िर काफ़िर कह कर सजा दिलवा रहे हैं, कबीर जी को बेड़ी (नाव) में बैठाया गया तथा गंगा के बीचों बीच धारा बहुत तेज़ बह रही थी कबीर जी को बेड़ी में से उठाकर भारी जंज़ीरों तथा पत्थरों सहित गंगा में फैंक दिया। बेड़ी आगे बह गई। सभी को बड़ी हैरानी हुई कि कबीर जी तो पानी में चौकड़ी मार कर बैठे हैं, उनके साथ बन्धी भारी जंज़ीरें और पत्थर पानी में बह गये और कबीर जी मृगछाला पर बैठे हैं? इस आप-बीती को कबीर साहिब ने बाणी में इस प्रकार अंकित किया है -

गंग गुसाइनि गहिर गंभीर।
जंजीर बांधि करि खरे कबीर॥
मनु न डिगै तनु काहे कउ डराइ॥
चरन कमल चितु रहिओ समाइ॥ रहाउ।
गंगा की लहरि मेरी टुटी जंजीर।
म्रिगछाला पर बैठे कबीर॥
कहि कंबीर कोऊ संग न साथ।
जल थल राखन है रघुनाथ॥ *अंग - 1162*

गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।।

सन्त बाबा वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

सतिनामु श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज।
डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ॥
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥

अंग - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥

अंग - 289

धारना - सगल भवन के नाइका
मैनूं इक छिन दरस दिखाइ जी।

कूपु भरि जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ ॥
ऐसे मेरा मनु बिखिआ बिमोहिआ
कछु आरा पारू न सूझ ॥ 1 ॥
सगल भवन के नाइका इकु छिनु दरसु दिखाइ जी ॥
2 ॥ रहाउ ॥
मलिन भई मति माधवा तेरी गति लखी न जाइ ॥
करहु क्रिपा भ्रमु चूकई मै सुमति देहु समझाइ ॥2॥
जोगीसर पावहि नही तुअ गुण कथनु अपार ॥
प्रेम भगति कै कारणै कहु रविदास चमार ॥

अंग - 346

साधुसंगत जी! उच्च स्वर में बोलो जी! सतिनाम श्री वाहिगुरू। कल्युग के अन्दर दो चीजें दुर्लभ हैं। दुर्लभ उसे कहते हैं जबकि बहुत प्रयासों के बाद भी वह चीज न मिल पाती हो। ये दो चीजें हैं हरियश और साधू की संगत -

हरि कीरति साधसंगति है सिरि करमन कै करमा ॥
कहु नानक तिसु भइओ परापति
जिसु पुरब लिखे का लहना ॥ ***अंग - 647***

लेकिन हमें इस बात की समझ न होने के कारण समय बीतता जा रहा है। असंख्य लोग जा चुके हैं और असंख्य पीछे चले आ रहे हैं। वे भी निकल जाएँगे और जो पीछे आ रहे हैं वे भी निकल जाएँगे लेकिन हैरानी इस बात की है कि इस मनुष्य को समझ नहीं आ रही है। इसे चारों वेद, छः शास्त्र, सत्ताइस स्मृतियाँ, उपनिषदें, कुरान शरीफ, तौरेतु, अंजील, जंबूर, बाइबिल, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी बखूबी समझा रहे हैं लेकिन इसे पता ही नहीं चल पा रहा है और बहुत सारी कीमती चीजें इसके पास से वैसे ही चली जाती है। मनुष्य जन्म बड़ी मुश्किल से तुम्हें प्राप्त हुआ है यह वैसे ही या अचानक ही प्राप्त नहीं हो गया है। यह तो असंख्य प्रकार की योनियों में घूमते-घूमते पूर्व जन्म का कर्म जागृत हो गया जिसके फलस्वरूप हमें मनुष्य जन्म प्राप्त हो गया है -

फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ मानस देह लही ॥
नानक कहत मिलन की बरीआ सिमरत कहा नही ॥

अंग - 631

अब वाहिगुरू को मिलने की हमारी बारी आ गई है क्योंकि हमें पता ही नहीं है कि हम सब से इसे अन्धकूप में लाचार हुए घूम रहे हैं। इसीलिए महाराज जी कथन करते हैं कि - 'फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ' ये जन्म सैकड़ों भी हो सकते हैं, हजारों भी हो सकते हैं। यदि हम चार युग के समय का ही आकलन करें तो यह 43 लाख 20 हजार वर्ष का होता है। गुरू जी कहते हैं कि तुम्हें बहुत युग बीत गए हैं, इस प्रकार के चक्रव्यूह में फँसे हुए। इतना समय तुम कहाँ रहे? कहाँ की सैर करी? आदमी यात्रा पर निकलता है, यात्रा को तय करता है और उसे पता होता है कि मैं अमुक-अमुक देश में गया था, संसार में अमुक स्थान पर गया था लेकिन हमें अपनी यात्रा के बारे में कोई ज्ञान नहीं है कि हम कहाँ-कहाँ फिरते रहे। यह बात हमें महाराज जी से पूछनी चाहिए क्योंकि हमें तो इस बार में कुछ भी ज्ञान नहीं है कि हम इस दौरान कहाँ पर रहे। हमें तो वर्तमान जन्म की भी, विशेष रूप से बचपन की बहुत सी बातें भूल गई हैं। गुरू जी फुरमान करते हैं कि ऐ प्रेमीपुरुष! तुम युगों-युगान्तरों से घूमते फिर रहे हो। जीव पूछता है कि महाराज जी! फिर मैं कहाँ पर रहा? हम सब कहाँ रहे? इसके जवाब में गुरू जी फुरमान करते हैं -

धारना - केते नाग कुली महि आए,
केते पंख उडाए ने।

कई जनम भए कीट पतंगा ॥

कई जनम गज मीन कुरंगा ॥
कई जनम पंखी सरप होइओ ॥
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ ॥ 1 ॥
मिलु जगदीस मिलन की बरीआ ॥
चिरंकाल इह देह संजरीआ ॥ *अंग - 176*

हम लोगों ने जो यात्रा तय की है, जो कि हमें याद नहीं है, उसके बारे में गुरू जी जो फुरमान करते हैं, उसे ध्यानपूर्वक सुनो कि हम लोग उस चक्रव्यूह में फँसे हुए कहाँ-कहाँ घूमते रहे। 'कई जन्म भए कीट पतंगा।। कई जनम गज मीन कुरंगा।।' हम कीड़े-पतंगे बनते रहे, कभी हाथी बने, मछलियाँ बने, हिरण वगैरह बने, घोड़े व बैल बने।

कई जनम सैल गिरि करिआ ॥
कई जनम गरभ हिरि खरिआ ॥
कई जनम साख करि उपाइआ ॥
लख चउरासीह जोनि भ्रमाइआ ॥ *अंग - 176*

पत्थर वगैरह बनकर लाखों वर्ष सोए ही रहे -

केते रूख बिरख हम चीने केते पसू उपाए ॥
केते नाग कुली महि आए केते पंख उडाए ॥
अंग - 156

24 लाख प्रकार के वृक्ष, जड़ी बूटियाँ, वनस्पति आदि को सयाने लोगों ने गिना है इसके अतिरिक्त साढ़े सात लाख प्रकार के वे जीव हैं जो कि पेट के बल चलते हैं तथा साढे सात लाख प्रकार के पक्षी हैं जो कि उड़ते घूमते हैं। चार लाख प्रकार के पत्थर भी हैं जिनके अन्दर जान होती है। चार लाख प्रकार के पैरों से चलने वाले जीव जन्तु हैं, बाकी योनियाँ समुद्रों के अन्दर हैं। 83 लाख, 99 हजार 999 शरीरों में से होकर हमें यह मनुष्य शरीर प्राप्त हुआ है। गुरू जी कहते हैं कि यह शरीर तुम्हें एक बार नहीं बल्कि कई बार मिल चुका है, लेकिन प्रत्येक बार होता यही है कि हम अनजानेपन में इस उत्तम अवसर को यूँ ही गंवा कर पुनः योनियों के चक्रव्यूह में गिर जाते हैं। यह भी वाहिगुरू जी की कृपा ही है कि तुम्हें यह याद नहीं है कि तुम पिछले जन्म में क्या थे? यदि कहीं तुम्हें याद हो कि तुम फलाँ व्यक्ति के बैल थे और यह तुम्हें बहुत मारा करता था तो फिर तुम्हारा मन और ही तरह का हो जाता। इसलिए परमात्मा हमें, हमारा पिछला जन्म भुला देते हैं। महापुरुष हमें याद करवा देते हैं कि तुम्हारी यात्रा इस प्रकार की रही है। अब आप ही देख लो पक्षियों को कितना मुश्किल है उन्हें दाना डाल दो, लकिन वे आस पास ही देखते रहते हैं कि कहीं कोई बाज, झपट्टा न मार दे या कोई वैरी ही हमला न कर दे। पशु बाँधा हुआ खड़ा है और वह पराए वश में पड़ा हुआ है। चाहे उसे छाया में बाँध दो, चाहे धूप में बाँध दो, उसकी अपनी कोई मर्जी नहीं है कि मुझे कोई जरूरी तौर पर धूप में ही बाँधे। उसका अपना कोई अधिकार नहीं है। यह तो उसके मालिक के मन की बात है। यदि उसके मन में दया आ गई तो ठीक है वरन उसका कोई जोर नहीं है। हल में चलते-चलते पशुओं को हमने यू.पी. में मुसलमानों की अधिक आबादी वाले क्षेत्रों में देखा है कि जब उनके यहाँ विवाह, शादी के समय उनका भाईचारा कहता है कि इस पशु को काटो इसे हमने खाना है। कहने का तात्पर्य यह है कि पशु की कोई जिन्दगी नहीं है, उसकी कोई सुरक्षा नहीं है यानि कि वह इतना परतन्त्र है। 83 लाख 99 हजार 999 योनियों को कोई आजादी नहीं है, इनमें से घूमते-घूमते मनुष्य की देह प्राप्त हुई है। मनुष्य की देह मिलते ही इसे कई प्रकार की बीमारियाँ लग गई हैं -

बैर बिरोध काम क्रोध मोह ॥
झूठ बिकार महा लोभ धोह ॥
इआहू जुगति बिहाने कई जनम ॥
नानक राखि लेहु आपन करि करम *अंग - 268*

अतः यह हमारी यात्रा है -

सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ ॥
एती न जानउ केतीक मुदति चलते खबरि न पाइओ॥
अंग - 999

तुम कितनी देर से चले हुए हो, इसका कोई पता नहीं है, लेकिन चलते-चलते इसका कोई पूर्वजन्म का संस्कार जाग उठे, फलस्वरूप इसे किसी साधू की संगत प्राप्त हो जाए तो वे इसे समझा देते हैं कि ऐ प्रेमीपुरुष! जिन कार्यों में तुम लगे हुए हो ये तो किसी भी काम के नहीं हैं -

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥ *अंग - 12*

तुम तो निरर्थक कार्य कर रहे हो जिनका कुछ भी मतलब नहीं है। यहाँ पर तो आकर न जाने कितने बड़े-बड़े बादशाह बन गए, कितने बड़े-बड़े पीर, पैगम्बर बन गए लेकिन संसार पर तो कोई भी दिखाई नहीं पड़ता है, बस उनके किले वगैरह ही खड़े नजर आते हैं। वे साथ में तो कुछ भी नहीं लेकर गए। बस, उनके दिमाग में एक फितूर सा उत्पन्न हो जाता है और उसी कारण से वह न जाने किन-किन व्यर्थ के कार्यों में आजीवन पड़ा रहता है। किसी बादशाह के मन में यदि यह फितूर उत्पन्न हो गया तो वह दूसरे देशों को जीतने की ख्वाहिश मन में धारण कर लेता है और उन्हें जीत लेने के जुगाड़ में लग जाता है।

सिकन्दर बादशाह अपने घर में बड़ी अच्छी रोटी खाता

था। वह मकदूनिया, यूनान का रहने वाला था। बीस साल की युवावस्था में उसके मन में ख्याल आ गया कि मैंने पूरी दुनिया को जीतना है, बस इसी इच्छा के तहत वह अन्य देशों को जीतने के जुगाड़ में लग गया और आखिर में हिन्दोस्तान (भारतवर्ष) में आ गया। यहाँ के लोग करनी-कमाई वाले थे, अपने धर्म-कर्म में पक्के थे। इसलिए राजा पोरस ने उसे आगे निकलने ही न दिया, बड़ी मुश्किल से वह उसे (राजा पोरस को) हरा पाया लेकिन वह वापिस लौट गया। उसे बारह वर्ष बीत गए थे और समुद्र के रास्ते वापिस लौट रहा था और समुद्र में स्नान करने के कारण गर्म-सर्द हो गया। बीमारी लम्बी हो गई। उसने ज्योतिषविदों को बुलाकर पूछा कि मेरी मृत्यु कब होगी? ज्योतिषविदों ने हिसाब किताब लगाकर बतला दिया कि बादशाह! जब धरती लोहे की और आसमान सोने का बन जाएगा तो उस समय तुम्हारी मृत्यु होगी। सारे ज्योतिषविदों ने ही एक बात कही। चलते-चलते चला जा रहा है, घोड़े पर सवार है और जल्दी-जल्दी सफर को खत्म करने के उद्देश्य से लम्बे-लम्बे पड़ाव लगा रहा है और आज वह बेहोश होकर घोड़े से नीचे गिर पड़ा। पास में कोई चीज नहीं है इसलिए उसके अंगरक्षकों ने उसी की लोहे का रक्षा कवच (बुलेट प्रुफ जाकेट की तरह से लोहे की बनी हुई एक जैकेट जैसी पोशाक, जिसे कि तीर, बरछा या गोली आदि वेध न सके) को नीचे बिछा दिया। धरती बहुत गर्म थी और मुँह पर भी तेज धूप पड़ रही थी। इसलिए उसके अंगरक्षकों ने उसकी सोने की प्लेट लगी हुई ढाल को बरछे पर टांग कर उसे छाया कर दी। जब दवाइयों के द्वारा उसे होश आई तो उसने धरती पर हाथ मारा। वह क्या देखता है कि मेरे नीचे तो लोहा है यानि कि उसे लोहे की धरती महसूस होने लगी और जब उसने ऊपर की तरफ देखा तो उसके मुँह पर सुनहरी किरणें पड़ रही थीं। उसने जान लिया कि अब आसमान सोने का हो गया है। ऐसी स्थिति को देखकर वह रो पड़ा। उसने बड़े-बड़े हकीमों को बुलाया और कहने लगा कि मुझे कोई ऐसी दवाई दो ताकि मैं अपने घर पहुँच कर अपनी माँ को यह बतला सकूँ कि मैंने बारह वर्ष में कितने युद्ध जीते हैं। ज्योतिषविदों की तरफ से कोई जवाब नहीं आ रहा है क्योंकि उसके समान प्राणों की गांठ खुल चुकी थी। कहने लगा, आप लोग बोलते क्यों नहीं हो? यदि तुम लोग इस प्रकार से कोई दवाई नहीं दे सकते हो तो मैं तुम्हें अपना आधा राज्य दे दूँगा, मुझे घर पहुँचने तक की दवाई दे दो। वे फिर भी नहीं बोले। फिर कहने लगा, मैं तुम लोगों को वह सभी राज भाग, जिसे मैंने आज तक जीता है, दे दूँगा, मुझे कोई दवाई दे दो, मैं तो केवल यूनान में रह कर ही अपने दिन काट लूँगा। वे फिर भी नहीं बोले। कहने लगा, मेरा सारा राज भाग यूनान का भी तुम्हीं लोग सम्भाल लो। वे फिर भी कुछ भी नहीं बोल रहे हैं।

सिकन्दर बादशाह कहने लगा, तुम लोग मेरी किसी भी बात का जवाब क्यों नहीं दे रहे हो?

जो सबसे बड़ा हकीम था वह कहने लगा, बादशाह सलामत! इस समय आपके प्राणों की गांठ खुल चुकी है, इसलिए आप तो केवल इसी संसार के राजभाग की बात कर रहे हो, यदि आप तीनों लोगों का राजभाग भी दे सको तो भी हम सब लोग, एक भी अतिरिक्त श्वास आपको नहीं दिला सकते हैं। अब तो आपके पास केवल गिनती के श्वास ही बचे हैं और आपका शरीर अब यहीं पर शान्त हो जाना है।

उस समय बादशाह बहुत रोया और कहने लगा, तो फिर इसका मतलब यह है कि मैंने जो यह राजभाग जीता है इसकी कीमत एक श्वास के बराबर भी नहीं है?

यदि हम लोग भी गौर से देखें तो नित्य प्रतिदिन हम लोग चौबीस हजार श्वास बरबाद कर देते हैं। ये हमारे श्वास कितने कीमती हैं। यदि परमात्मा किसी व्यक्ति को सौ वर्ष की आयु दे दे तो उसे 87 करोड़ 60 लाख श्वास आया करते हैं और यदि परमात्मा 75 वर्ष की आयु दे तो उसे 65 करोड़ 70 लाख श्वास आया करते हैं लेकिन इन श्वासों में से हमारे कितने श्वास लेखे में लगा पाते हैं? हम प्रायः अपने सभी के सभी श्वास बरबाद करके संसार से रुखसत हो जाते हैं। बहुत ही मुश्किल से हमें मनुष्य शरीर प्राप्त हुआ है लेकिन हम इसकी कीतम को न समझते हुए, इससे कोई भी लाभ प्राप्त नहीं कर पाते हैं। दरअस्ल हम इस मनुष्य शरीर की कीमत को ही नहीं जान सके हैं। यदि हम इसके महत्व को रेखांकित करना चाहते हैं तो आप ध्यानपूर्वक सुनने का प्रयत्न करो।

जिस प्रकार से हम मकान बनाते हैं और उसमें ईंटें लगाते हैं, इसी प्रकार से इस शरीर के निर्माण में 14 खरब सेल लगे हुए हैं। पहली बात तो यह है कि इतने सेल्स को गिन पाना ही मुश्किल है। नौ महीनों में परमेश्वर ने कितना सुन्दर मकान बना कर जीवात्मा को दे दिया। इसमें बहत्तर करोड़, बहत्तर लाख, बहत्तर हजार दो सौ रक्त वाहिनी नलिकाएँ हैं। इसमें पाँच प्राण हैं, पाँच तत्व हैं, पच्चीस प्रकृतियाँ हैं तथा आँखें, कान व नाक आदि बने हुए हैं और पाँच vital forces इसके सारे काम काज को चलाती हैं। इन्हीं को हम प्राण कहते हैं ये अन्तिम श्वास तक कार्य करते हैं। 20

हजार नाड़ियाँ तो इसके अन्दर ऐसी हैं, जिन्हें देखा जा सकता है तथा इसमें से 20 नाड़ियां तो बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। इनमें से पुनः तीन नाड़ियाँ ऐसी हैं जो अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इन्हीं में से मुख्य रूप से जीवन ऊर्जा बहती है। इनका नाम है इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना।

अतः इतना बहुमूल्य शरीर हमें परमात्मा ने दे दिया है। हमें, परमात्मा ने यह शरीर इसलिए नहीं दिया है कि eat drink and be merry for we shall have to die यानि कि खाओ पियो और ऐश करो। इस विधि से होता यह है कि हमारा जीवन व्यर्थ चला जाता है और यह किसी भी लेखे में नहीं लग पाता है क्योंकि हमने जो भी कर्म किए हैं, उनके फल तो भुगतने ही पड़ेंगे। जब फलों को भोगना पड़ता है तो उस समय व्यक्ति रोता है। अतः हमारा यह शरीर लेखे में लगना चाहिए। महाराज जी कहते हैं प्रेमीजन! तुम्हें इसकी कीमत का पता नहीं है। सारी कायनात, परमेश्वर की सारी रचना यानि कि परमेश्वर की सारी सृष्टि में जो सर्वाधिक कीमती चीज है, वह है तुम्हारा शरीर। यह इतना अधिक कीमती है कि इसे पाने के लिए महान सुखों में बैठे हुए देवगण भी लालायित रहते हैं। अधिकांश लोगों को तो पता ही नहीं है कि स्वर्गलोक क्या होता है और वहाँ पर कितना सुख होता है, अनुभवी महापुरुषों ने इसका हिसाब-किताब लगाने की कोशिश की है, उनके अनुसार जो इस संसार का बादशाह होता है वह भी ऐसा हो कि सारी दुनिया उसके कहने में चलती हो, उसे भगवान की तरह से मानती हो, उसके राज्य में कोई भी दुखी न हो, वह राजा कभी भी वृद्ध न हो, वह कभी बीमार न हो और उसका खजाना कभी भी खाली न हो, उस राजा को जितना सुख होता है वह सुख की एक इकाई होती है। अब इससे सौ गुणा अधिक सुख गन्धर्व लोक में होता है। यहाँ पर वे जीवात्माएँ पहुँच पाती हैं, जो पुण्य व दान बीजने के प्रतिफल स्वरूप अच्छे लोकों में जाने की हकदार होती हैं क्योंकि सभी लोग यहाँ पर यानि कि इस संसार में आने के बाद अच्छे कार्य का दान-पुण्य नहीं करते हैं और बल्कि वे तो बुरे कर्मों व विकारों आदि में ही पड़े रहते हैं तथा बुरे लेखों को लिखते रहते हैं लेकिन जब उन्हें इनके फलों को भोगना पड़ता है तो फिर वे बहुत दुखी होते हैं क्योंकि किए गए कर्म, कभी भी व्यर्थ नहीं जाते हैं अतः महाराज जी कहते हैं, प्रेमीजन!

ऐसा कंमु मूले न कीचै जितु अंति पछोताईऐ ॥
अंग - 918

तुम ऐसा कोई भी कार्य न करो जिसकी वजह से तुम्हें पाश्चाताप करना पड़े -

ऐसी कला न खेडीऐ जितु दरगह गइआ हारीऐ ॥
अंग - 469

तुम ऐसी बाजी मत खेलो जिसकी वजह से तुम्हें दरगाह में जाकर हार जाना पड़े क्योंकि वहाँ पर तो फिर केवल पाश्चाताप ही हमारे पास रह जाएगा -

धारना- जिंदे रोवेंगी ते रो रो पछोतावेंगी,
फेर तेरा कोई ना बणे।

लै फाहे राती तुरहि प्रभु जाणै प्राणी ॥
तकहि नारि पराईआ लुकि अंदरि ठाणी ॥
संनी देनि विखंम थाइ मिठा मदु माणी ॥
करमी आपो आपणी आपे पछुताणी ॥
अजराईलु फरेसता तिल पीड़े घाणी ॥ अंग - 315

आपीनै भोग भोगि कै होइ भसमड़ि भउरू सिधाइआ॥
वडा होआ दुनीदारू गलि संगलु घति चलाइआ ॥
अगै करणी कीरति वाचीऐ बहि लेखा करि समझाइआ॥
थाउ न होवी पउदीओ हुणि सुणीऐ किआ रूआइआ॥
मनि अंधै जनमु गवाइआ ॥ अंग - 464

दो तरीके हैं। एक तो वे हैं जिन्होंने यहाँ पर आकर समझ नहीं की, अपनी मनमर्जियाँ कीं, धक्के किए, दूसरों को धोखे दिए, वैर-विरोध किए, लोगों के साथ जोर जुल्म किए, लूट-खसूट किए। महाराज जी कहते हैं कि उनके ये कर्म उन्हें इस प्रकार की जगहों पर ले जाएँगे कि 'अजराईल फरेसता तिल पीड़े घाणी।।'

दरि लए लेखा पीड़ि छुटै नानका जिउ तेलु ॥
अंग - 473

जिस प्रकार से तेल निकाला जाता है इस प्रकार से उनका तेल निकाल दिया जाएगा। 18 बड़े-बड़े नर्क हैं, जहाँ पर कि ऐसे कर्म करने वालों को भेजा जाता है। इन लोगों को पामर या पापी कहते हैं। ये निहायत स्वार्थी प्रकृति वाले होते तथा दूसरे के बारे में तनिक भी सोचते नहीं हैं।

दूसरी प्रकार के वे लोग होते हैं जोकि दान पुण्य करते हैं, नेक कार्य करते हैं, रास्तों पर नल लगवाते हैं तथा अन्य विभिन्न प्रकार के जन कल्याण के कार्यों को करते हैं, सड़कों को साफ रखते हैं, दूसरों को सुख प्रदान करने की चेष्टा करते हैं तथा दुखी व्यक्ति के पक्ष में खड़े होते हैं तथा यथाशक्ति व यथा सम्भव उसकी मदद करते हैं लेकिन साथ ही वे इसका बदला भी चाहते हैं कि मुझे इसका फल मिले। फलस्वरूप इसका फल उन्हें मिलता है। कुछ यहाँ पर मिलता है तथा कुछ दरगाह में जाकर मिलता है। आम साधारण किए

गए दान सत्तर गुणा, दरगाह में बढ़ते हैं और दस गुणा यहाँ बढ़ते हैं। खेत का फर्क है -

खेतु पछाणै बीजै दानु ॥ ***अंग - 1411***

अच्छे खेत में, फसल हो तो वह अधिक बढ़ती है, महापुरुषों को, ब्रह्मज्ञानियों को दिया गया दान हजारों व लाखों गुणा बढ़ता है क्योंकि वे लंगर चलाते हैं, अस्पताल चलते हैं, गरीबों की मदद करते हैं। इस प्रकार से जो पुण्य-दान करते हैं उन्हें यमराज के पास हाजिर होना पड़ता है -

पुंन दानु जो बीजदे सभ धरम राइ कै जाई ॥

अंग - 1411

तीसरी प्रकार के वे लोग होते हैं जो कि महापुरुषों को मिलकर भजन बन्दगी करते हैं लेकिन पूर्ण नहीं हो सके, इन्हें योग भ्रष्ट कहा जाता है। ये अपने मनोरथ को तो समझ गए, गुरू भी धारण कर लिया, गुरवाणी भी पढ़ते हैं लेकिन उनके अन्दर अभी प्रकाश नहीं हो सका है यानि कि उन्हें आत्म-साक्षात्कार नहीं हो सका है और माया के प्रभाव से बाहर नहीं जा सके। इस प्रकार के प्रेमीजनों के मन में यह पाश्चाताप होता है कि मनुष्य जन्म भी प्राप्त हुआ लेकिन हम किसी किनारे पर नहीं पहुँच पाए। इन्हें योग भ्रष्ट कहते हैं। ये लोग जब अपने शरीर का परित्याग करते हैं तो इनकी पिछली करनी-कमाई को ध्यान में रखकर और उसे परख कर इन्हें पुनः मनुष्य शरीर प्राप्त हो जाता है ताकि जो इनकी कमी रह गई है वह पूरी हो सके।

सन्त महाराज जी (श्रीमान सन्त बाबा ईशर सिंह जी, राड़ा साहिब) बताया करते थे कि यदि तीन-चार बार ऐसा हो जाए तो उसकी निशानी यह है कि बच्चा चार पाँच वर्ष की आयु में ही कहने लगेगा कि मुझे गुरू धारण करवाओ, मुझे अमृतपान करवाओ, मैंने नाम स्मरण करना है, मुझे गुरवाणी पढ़नी है क्योंकि उसे पिछले जन्म का काफी ज्ञान होता है। जितने भी महापुरुष हुए हैं उन्हें तो वैसे भी पिछले जन्मों का ज्ञान हुआ करता है। अतः वे तो वैसे ही जान जाते हैं कि आज जो छोटा बच्चा आया है, इसने पिछले कई जन्मों में भक्ति की हुई है लेकिन यह अधूरा रह गया और यह कई जन्मों से अधूरा ही रहता चला आ रहा है। इस प्रकार की आत्माओं को योग भ्रष्ट कहा जाता है यदि उनके मन में कहीं यह वासना आ जाए कि हमें इसका फल प्राप्त होना चाहिए तो इन्हें ब्रह्मलोक में निवास मिल जाता है और उन्हें महान सुख की प्राप्ति हो जाती है लेकिन वे पार नहीं हो पाया करते हैं।

इसके आगे ऐसे भी होते हैं जो कि दिन रात परमेश्वर की भजन बन्दगी करते हैं, नाम स्मरण करते हैं, नेक कार्य करते हैं, और सच्चे दिल से कहते हैं 'नानक नाम चढ़दी कला तेरे भाणे सरबत का भला।' वे कभी किसी का बुरा नहीं चाहते हैं और सदैव परमात्मा के साथ जुड़े रहते हैं। उनकी वृत्ति शनैः शनैः ऐसी हो जाती है कि यदि उन्हें परमात्मा का नाम तनिक सा भी विस्मृत हो जाए तो उनकी मनोदशा अधोलिखित प्रकार से हो जाती है -

जिउ मछुली बिनु पाणीअै किउ जीवणु पावै ॥
बूंद विहूणा चात्रिको किउ करि त्रिपतावै ॥
नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै ॥
भवरू लोभी कुसम बासु का मिलि आपु बंधावै ॥
तिउ संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै ॥

अंग - 708

जो गुरू के साथ इस प्रकार का प्रेम करते हैं जैसे कि मछली पानी के साथ प्रेम करती है यानि कि -

अंतरि गुरू आराधणा जिहवा जपि गुर नाउ ॥
नेत्री सतिगुरू पेखणा स्रवणी सुनणा गुर नाउ ॥
सतिगुर सेती रतिआ दरगह पाईअै ठाउ ॥अंग - 517

उसे वाहिगुरू जी की दरगाह में या गुरू की दरगाह में निवास मिल जाता है।

धारना - दरगह मिलदै थाउं,
गुराँ नाल रतिआँ-रतिआँ।

इन चार प्रकार के मनुष्यों की चार प्रकार की गति होती है। पाँचवे प्रकार के लोगों की गति ऐसी होती है जिन्हें कि परमात्मा स्वयं भेजा करता है। परमात्मा उन्हें स्वयं भेजकर उनकी ड्यूटी लगा देता है कि जाओ! लोगों को सद्बुद्धि प्रदान करो, उन्हें उल्टी बातों की तरफ से रोको, उन्हें उनके मनोरथ के बारे में बतलाओ ताकि वे अपने जन्म को यूँ ही बरबाद न कर बैठें। इस प्रकार के सन्तजन या भक्तजन अपनी मर्जी से आया करते हैं। यथा -

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए ॥
जीअ दानु दे भगती लाईन हरि सिउ लैनि मिलाए॥

अंग - 749

उनका कार्य होता है वाहिगुरू के साथ से टूटी हुई आत्माओं को पुनः परमात्मा के साथ जोड़ देना। छठी प्रकार के वे लोग होते हैं जिन्हें यहाँ पर आकर ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है -

कबहू साधसंगति इहु पावै ॥
उसु असथान ते बहुरि न आवै ॥
अंतरि होइ गिआन परगासु ॥
उसु असथान का नही बिनासु ॥
मन तन नामि रते इक रंगि ॥

सदा बसहि पारब्रहम कै संगि ॥
जिउ जल महि जलु आइ खटाना ॥
तिउ जोती संगि जोति समाना ॥
मिटि गए गवन पाए बिस्राम ॥
नानक प्रभ कै सद कुरबान ॥ *अंग - 278*

वे कहीं जाया नहीं करते हैं। वे इस शरीर में रहते हुए भी जीवन-मुक्त होते हैं और बाद में भी। वे तो परमात्मा को इस प्रकार से देख लेते हैं, जैसे कि कोई चीज हाथ पर पड़ी हुई हो यानि कि जैसे हम किसी चीज को अपनी खुली आँखों से देख लें। इस प्रकार से उन्हें परमात्मा प्रत्येक स्थान पर अर्थात कण-कण में दिखाई पड़ने लगता है -

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई ॥
रवि रहिआ सरबत्र मै मन सदा धिआई ॥ 1 ॥
ईत उत नही बीछुड़ै सो संगी गनीअै ॥
बिनसि जाइ जो निमख महि सो अलप सुखु भनीअै॥
अंग - 677

अतः मैं यह विनती कर रहा था कि लोग स्वर्ग को बहुत ऊँचा गिनते हैं, लेकिन उससे भी ऊँची अवस्थाएँ वे होती हैं जो कि मैंने पिछली तीन बताई हैं। अब स्वर्ग लोक में तो चले जाएँ लेकिन उन्हें पुनः (पुण्य कर्मों का फल समाप्त हो जाने के बाद) मृत्यु लोक में भेज दिया जाता है। दोबारा फिर वही कार्य करने लग जाते हैं और दोबारा हमें कर्म बाँध लेते हैं। साथ ही हमें प्रारब्ध कर्मों के अनुसार फिर दुख-सुख भोगने पड़ते हैं। फिर हम रोते हैं और सुखों में भूल जाते हैं। वह जो मैं देव लोकों का जिक्र कर रहा था तो उपुर्यक्त व वर्णित बादशाह की अपेक्षा गन्धर्व लोक में सौ गुणा अधिक सुख हैं तथा गन्धर्व लोक की अपेक्षा देव गन्धर्व लोक में और सौ गुणा अधिक सुख हुआ करते हैं यानि कि यहाँ की अपेक्षा दस हजार गुणा सुख वहाँ होता है। उससे भी सौ गुणा सुख पितृलोक में होता है और उससे भी सौ गुणा सुख स्वर्गलोक में होता है। इन्द्र लोक से भी सौ गुणा सुख कर्मदेव लोक में फिर अजान देव लोक है, प्रजापति लोक है, ब्रह्म लोक है, शिव लोक है, बैकुण्ठ धाम है, सबमें इसी प्रकार से उत्तरोत्तर सौ-सौ गुणा अधिक सुख बढ़ते चले जाते हैं, कहीं खाली बैठ कर गुणा कर लेना कि यहाँ के बादशाह की अपेक्षा बैकुण्ठ धाम में कितना अधिक सुख है। इस प्रकार के मण्डलों में बैठे हुए देव गण भी इस मनुष्य देह को प्राप्त करने के लिए लालायित रहते हैं। इसका कारण यह है कि वे लोग तप साधना करके ऊपर के मण्डलों में पहुँच तो जाते हैं लेकिन एक निर्धारित समय के बाद उन्हें पुनः नीचे आ जाना पड़ता है वह निर्धारित समय चाहे लाख साल का हो और चाहे करोड़ साल का हो। यानि कि कोई स्थिर टिकाना उन्हें भी प्राप्त नहीं हो पाता है। दूसरी बात यह है कि यह जो हमारा मनुष्य शरीर है इसमें परमात्मा के प्रकट हो जाने की निश्चित सम्भावना है, अन्य किसी योनि में यह सम्भावना नहीं है। परमात्मा ने इस मनुष्य शरीर में अपना निवास रखा हुआ है। यथा -

काइआ नगरू नगर गड़ अंदरि ॥
साचा वासा पुरि गगनंदरि ॥
असथिरू थानु सदा निरमाइलु आपे आपु उपाइदा ॥
अंग - 1033

इस देही में वह बैठा है यदि उसे देखना हो तो फिर आन्तरिक आँख को खोलना पड़ेगा। आन्तरिक आँख को खोलने का यत्न महाराज जी ने इस प्रकार से फुरमान किया है -

नउ दरवाजे काइआ कोटु है दसवै गुपतु रखीजै ॥ बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै ॥
अनहद वाजे धुनि वजदे गुर सबदि सुणीजै ॥
तितु घट अंतरि चानणा करि भगति मिलीजै ॥
सभ महि एकु वरतदा जिनि आपे रचन रचाई ॥
अंग - 954

वाहु वाहु सचे पातिसाह तू सची नाई ॥ *अंग - 947*

यह जो शरीर है, यह नौ दरवाजों वाला एक किला है दोनों आँखें , दो नाक, दो कान, मुँह व मल-मूत्र के द्वारा। इस प्रकार ये नौ द्वार बन जाते हैं। ये सारे नौ दरवाजे बाहर की ओर ही खुलते हैं, अन्दर की तरफ नहीं। बहुत थोड़े से लोगों को इस बात का ज्ञान है कि ये अन्दर की तरफ भी खुलते हैं। जब आन्तरिक आँख खुल जाती है तो इसे दिव्य चक्षु कहते हैं। उससे क्या होता है? उसके द्वारा फिर सारी सृष्टि दिखाई पड़ने लग जाती है। जब दिव्य कान खुल जाते हैं तो फिर अनहद नाद, जो कि परमात्मा की दरगाह में बज रहा है, सुनाई देने लग पड़ता है। जब दिव्य रसना (जिह्वा) खुल जाती है तो फिर नाम का ऐसा आनन्दमयी रस चढ़ जाता है कि फिर उसका नशा उतरता ही नहीं है -

धारना - चड़ी रहे दिन रात,
नाम खुमारी-नाम खुमारी।

पोसत मद अफीम भंग, उतर जाइ परभाति।
नाम खुमारी नानका चड़ी रहे दिन राति।
(जनम साखी)

दिव्य रसना के खुलने से फिर वह महान रस में चला जाता है। इसी प्रकार जब दिव्य नासिका खुल जाती है तो

फिर बिना इत्र या परफ्यूम आदि लगाने से ही सुगन्ध आने लगती है। इन चीजों के बारे में हमें पता न होने के कारण हमारा बहुमूल्य मनुष्य शरीर यूँ ही व्यर्थ चला जाता है। फिर हमारी ये सारी की सारी इन्द्रियाँ जिन्हें कि हम (दिव्य इन्द्रियों को) प्रयोग में ही नहीं लाते हैं, वे बेकार चली जाती है और वे किसी भी लेखे में नहीं आ पाती है। गुरू महाराज जी कहते हैं कि प्रेमीजनो! यह जो शरीर है इसके नौ दरवाजे हैं लेकिन इसका एक ऐसा दरवाजा भी है जिसे कि तुमने कभी भी खोलने का यत्न नहीं किया है। वह इसलिए नहीं खुलता है क्योंकि उसके आगे एक दरवाजा लगा हुआ है। जिसे कि बज्र कपाट का नाम दिया गया है। जब तक गुरू से शब्द नहीं मिलता है, यानि कि पाँच प्यारों से वाहिगुरू मन्त्र प्राप्त नहीं होता है, और वह उस चाभी का बखूबी प्रयोग नहीं करता है, तब तक वह दरवाजा खुलता ही नहीं है। वास्तविकता यह है कि परमात्मा ने उसे बन्द करके रखा हुआ है -

जिस का ग्रिहु तिनि दीआ ताला
कुंजी गुर सउपाई ॥
अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई ॥
अंग - 205

चाहे जितना मर्जी जोर लगा लो वह दरवाजा खुलने वाला नहीं है, जब तक सतगुरू की शरण में नहीं आता है और सतगुरू चाभी नहीं देता है, यानि कि शब्द नहीं देता है, तब तक वह दरवाजा नहीं खुलता है क्योंकि यह दरवाजा लोहे का तो है नहीं, न ही उसकी लोहे वाली चाभी है और न ही उसकी कोई नम्बरों वाली चाभी है, यहाँ तो शब्द या मन्त्र वाली चाभी है जैसे कि अली बाबा का दरवाजा 'सिम-सिम' कहने से खुल जाता था। वह प्रतीकात्मक कथा है। कहानी तो वह बहुत ही जबरदस्त बनाई हुई है लेकिन उसका आन्तरिक भाव बहुत ही महत्वपूर्ण है। अन्दर बेशुमार दौलतें पड़ी हुई हैं कि आदमी देख कर हैरान हो जाता है कि इतनी दौलत? और वे दरवाजा खोल लेते थे। वे भी बज्र कपाट लगे हुए थे, वे भी के निर्धारित मन्त्र द्वारा खुल जाते थे। इसी प्रकार से गुरू जी फुरमान करते हैं कि -

गुरदुआरै लाइ भावनी
इकना दसवा दुआरू दिखाइआ ॥
तह अनेक रूप नाउ नव निधि
तिस दा अंतु न जाई पाइआ ॥ *अंग - 922*

इतने खजाने हैं कि उसका अन्त ही नहीं पाया जा सकता है और ये सारे मनुष्य के अन्दर ही पड़े हैं। तथा ये हाथ जोड़ कर पीछे घूमते हैं कि हमारा प्रयोग करो लेकिन महाराज जी ने इनका प्रयोग करने के लिए मना किया है कि इन्हें अपने लिए प्रयोग में नहीं लाना है। अतः ऐसा शरीर है - 'बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै' जब खुल गए तो फिर उसकी निशानी क्या है? 'अनहद वाजे धुनि वजदे गुर सबदि सुणीजै।।' वहाँ पर तो फिर निरन्तर चौबीसों घंटे धुन बज रही है। वहाँ पर कौन पहुँचा सकता है? गुरू जी कहते हैं कि वहाँ तो केवल गुरू ही पहुँचा सकता है, गुरू के बिना वहाँ पहुँचाने वाला दूसरा कोई समर्थ ही नहीं है और गुरू तो कहते ही उसे हैं जो कि -

घर महि घरू देखाइ देइ सो सतिगुरू पुरखु सुजाणु ॥
अंग - 1291

जो इस शरीर में वाहिगुरू जी का घर दिखला दे वही गुरू हुआ करता है। कहते हैं कि फिर उसकी निशानी क्या है? क्योंकि कहीं वैसे ही न कह दे कि तुम्हें घर दिखलाई पड़ गया है।

गुरू जी कहते हैं कि -

पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु ॥ दीप लोअ पाताल तह खंड मंडल हैरानु ॥
तार घोर बाजित्र तह साचि तखति सुलतानु ॥
अंग - 1291

वहाँ पर पाँच शब्दों की धुनकार हो रही है, वहाँ पर निशानी उन शब्दों की ही है तथा वहाँ पर विस्माद ही विस्माद है, वहाँ इतने नाद बजते हैं कि उसका कोई लेखा-जोखा ही नहीं किया जा सकता है। गुरू महाराज जी ने 'सो दरु' की पउड़ी में इस दरवाजे पर (परमात्मा के द्वार पर) जो खड़े होकर गा रहे हैं, उनकी गिनती करने के बाद लिखा है कि-

होर केते गावनि से मै चिति न आवनि
नानकु किआ वीचारे ॥ *अंग - 6*

यानि कि कितने लोगों का नाम लें क्योंकि वहाँ पर तो कोई गिनती ही नहीं है। गुरू जी कहते हैं कि यह सब इस शरीर के अन्दर ही हो रहा है क्योंकि वाहिगुरू या परमात्मा इस शरीर के अन्दर ही बैठा है, वह कहीं बाहर नहीं बैठा हुआ है।

सुखमन कै घरि रागु सुनि सुंनि मंडलि लिव लाइ ॥
अकथ कथा बीचारीऐ मनसा मनहि समाइ ॥
अंग - 1291

अब महाराज जी कहते हैं कि जो सुखमना (सुषुम्ना) नाड़ी तुम्हारे अन्दर है उसके साथ अपनी सुरति को जोड़ लो। जब तुम शब्द के साथ अपनी सुरति को जोड़ोगे तो वह शब्द

(शेष पृष्ठ 39 पर)

सन्त बाबा लखबीर सिंह जी द्वारा आयोजित पृथक-पृथक क्षेत्रों में गुरमति समागम के दृश्य

नगर धमोट (लुधियाना) में

पलिया कलां (यू. पी.) में

सोलखियाँ में रक्तदान शिविर के दौरान सन्त बाबा सरूप सिंह जी सोलखियाँ वालों के साथ सुशोभित सन्त बाबा लखबीर सिंह जी - रतवाड़ा साहिब

मिशन की शाखा 'संत बेला' (श्री अनंदपुर साहिब) में
नवनिर्मित निःशुल्क 'सन्त माता रणजीत कौर पौली
क्लीनिक' की शुरूआत के समय क्षेत्रीय श्रद्धालुजन
तथा उपस्थित चिकित्सकगणों के साथ सन्त बाबा
हरपाल सिंह जी के पृथक-पृथक दृश्य

सन्त बेला (श्री अनंदपुर साहिब) में मानसिक रोगियों के उपचारार्थ बनने जा रहे 'सन्त बाबा वरियाम सिंह सुख स्थान' के शिलान्यास के अवसर के पृथक-पृथक दृश्य

घनौर (पटियाला) में सन्त महाराज जी तथा सन्त माता जी (बीजी) रतवाड़ा साहिब वालों की याद में आयोजित सालाना समागम के समय सन्त बाबा हरपाल सिंह जी अपने जत्थे समेत कीर्तन की हाजिरी भरते हुए

सन्त बेला (श्री अनंदपुर साहिब) में चढ़ती पूर्णमाशी को रैन सबाई कीर्तन का अनुपम दृश्य

(पृष्ठ 30 का शेष)

तुम्हारी सुरति को ऊपर उठाकर उस जगह पर ले जाएगा जहाँ पर कि अनहद झंकार हो रही है। अब हम अपनी सुरति को तो एकत्र करना नहीं चाहते हैं और वह तो निरन्तर बहिर्मुखी ही बनी रहती है तो फिर उच्चावस्था कैसे प्राप्त हो पाएगी? हमारी सुरति तो सदैव बाह्य आनन्द में ही मस्त रहती है कि मेरे पास इतनी जमीन, मेरे पास इतनी जायदाद है, आदि। अरे भाई! तुम इस जमीन का क्या करोगे? क्या तुम इसे अपने साथ ले जा पाओगे? क्या करोगे तुम इस जमीन का? यह तो चार दिन का बाजा है, इसे बजा लो। पहले भी सारे इसे छोड़कर जा ही चुके हैं, तुमने भी चले जाना है। बस यह तो ऐसा ही खेल है जो निरन्तर चलता रहता है -

फरीदा किथै तैडे मापिआ जिन्ही तू जणिओह ॥
तै पासहु ओइ लदि गए तूं अजै न पतीणोहि ॥
अंग - 1381

तुम्हारे माँ-बाप कहाँ चले गए जो कि तुम्हें गोदी उठाकर घूमा करते थे? तुम्हें अंगुली पकड़ कर चलाया करते थे? वे चले गए और तुम्हारा भी यही हाल होना है। अतः तुम इन सब चीजों में मत फँसो और आन्तरिक खोज को करने का प्रयास करो, तुम्हें जो यह शरीर मिला है, इसे यूँ ही न गंवाओ। यदि तुमने इसे यूँ ही गंवा लिया तो फिर महाराज जी इस बारे में बहुत बड़ा उलाहना देते हैं। आप फुरमान करते हैं कि -

धारना - काहनूं जंमणा सी भगती तों हीणिआ ओए।

इस प्रकार का यह बेशकमीती शरीर है यदि तुमने इसे explore नहीं किया, इसकी खोज नहीं की, तो फिर तुम्हीं बतलाओ कि फिर तुमने यह जन्म क्यों धारण किया है? फिर यहाँ संसार में आने का तुम्हारा क्या लाभ है?

जिनी ऐसा हरि नामु न चेतिओ
से काहे जगि आए राम राजे ॥
इहु माणस जनमु दुलंभु है
नाम बिना बिरथा सभु जाए ॥ अंग - 450

फिर तो यह किसी काम का नहीं है बल्कि यह तो उल्टा जाते समय अपने साथ लकड़ियाँ लेकर चला जाता है यानि कि उल्टा नुक्सान ही करके जाता है -

नरू मरै नरू कामि न आवै ॥
पसू मरै दस काज सवारै ॥ अंग - 871

ऐ भद्रपुरुष! तुम चौरासी लाख योनियों के बीच से गुजरते हुए इन्सान बने हो और अब नाम स्मरण करने का तुम्हारा समय है लेकिन तुम इस महान कार्य को करने की बजाए अन्य निरर्थक कार्यों में पड़े हुए हो। अब यदि किसान गेहूँ की ऋतु के समय उसकी बोवाई न करे तो फिर साल भर वह और उसका परिवार क्या खाएगा?

हुणि वतै हरि नामु न बीजिओ
अगै भुखा किआ खाए ॥ अंग - 450

फिर किसान का खेत वैसे ही खाली रह जाएगा क्योंकि ऋतु के अनुसार उसने बीज नहीं डाला। इसी प्रकार से यदि इस जीव ने मन के पीछे लगकर अपने जीवन को गुजार दिया और गुरू की बात ही नहीं मानी तो फिर क्या होगा -

दुख विचि जंमै दुखि मरै हउमै करत विहाइ ॥
अंग - 947

तुमने तो 'मैं', 'मैं' करते हुए अपना सारा जीवन गुजार दिया, अब क्या होगा?

मनमुखा नो फिरि जनमु है नानक हरि भाए ॥
अंग - 450

मनमुखि आवै मनमुखि जावै ॥
मनमुखि फिरि फिरि चोटा खावै ॥
जितने नरक से मनमुखि भोगै
गुरमुखि लेपु न मासा हे ॥ अंग - 1073

गुरुमुखजनों के लिए तो यह रास्ता नहीं है। लेकिन जो लोग मनमुख हैं यानि कि मन के पीछे चलने वाले हैं, उनके लिए यही रास्ता है, उन्हीं के लिए गुरू जी फुरमान करते हैं कि 'मनमुखा नो फिरि जनम है नानक हरि भाए।।'

अतः गुरू जी इस जीव को सचेत करते हुए फुरमान करते हैं कि जो इतना कीमती शरीर है, जिसके अन्दर तुमने परमात्मा को तलाशना था, वह तलाश तो तुम कर नहीं सके, गुरू से तुमने चाभी प्राप्त नहीं की, उसके द्वारा प्रदत्त मन्त्र की कमाई नहीं की तो बतलाओ इस संसार में आने का तुम्हारा क्या लाभ हुआ? फिर चाहे तुम संसार पर आए, चाहे नहीं आए, सब एक बराबर ही है -

आवन आए स्रिसटि महि बिनु बूझे पसु ढोर ॥
नानक गुरमुखि सो बुझै जा कै भाग मथोर ॥
अंग - 251

संसार में तो आ गया लेकिन अपने मनोरथ को समझा नहीं उसकी प्राप्ति हेतु प्रयत्न नहीं किया, फिर तो वह मानो पशु तुल्य ही रह गया।

'चलता'

आत्म ज्ञान

सन्त वरियाम सिंह जी
सम्पादक - प्रो. गुरदेव सिंह

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, पृष्ठ - 39)

गुरू महाराज जी कहने लगे, भाई धिंग! सैण जी ने भक्ति व सेवा करके बहुत बड़ी प्राप्ति कर ली है। इसलिए तुम भी सन्तजनों की सेवा किया करो क्योंकि सेवा से मेवा मिलता है। सेवा करने से गुरू प्रसन्न हो जाता है। जब गुरू प्रसन्न हो जाए तो फिर वह परमात्मा के साथ मिलाप करवा देता है। केवल सेवा ही नहीं करनी है, बल्कि दोनों रहट चलाने हैं यानि कि सेवा के साथ-साथ नाम भी जपना है, परमेश्वर को याद भी रखना है। नाम स्मरण करके दुखों का नाश होता है और सेवा करने से दरगाह में सम्मान मिलता है। सेवा करके घमंड नहीं करना है कि मैं कुछ विशेष व्यक्ति हूँ। अथवा यदि मैं न होता तो फिर यह सेवा नहीं हो पानी थी क्योंकि घमंड करने से हउमै उत्पन्न हो जाती है और फिर की गई सेवा लेखे में नहीं पड़ पाती है। सेवा तो वही सफल होती है जिसके द्वारा गुरू प्रसन्न हो जाए। दूसरी बात यह है कि सेवक अपनी 'मैं' को बाहर निकाल कर अत्यन्त विनम्र होकर, चाव सहित व खुशी-खुशी सेवा करे तथा अपना एक श्वास भी व्यर्थ न जाने दे। यथा -

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ ॥
ता दरगह बैसणु पाईऐ ॥
कहु नानक बाह लुडाईऐ ॥ *अंग - 26*

विचि हउमै सेवा थाइ न पाए ॥
जनमि मरै फिरि आवै जाए ॥
सो तपु पूरा साई सेवा जो हरि मेरे मनि भाणी हे ॥
अंग - 1071

पानी पखा पीसउ संत आगै गुण गोविंद जसु गाई ॥
सासि सासि मनु नामु सम्हारै इहु बिस्राम निधि पाई॥
अंग - 673

जो सेवा मनमति के माध्यम से है कि लोग मेरी वाह-वाह करें, वे कहें कि यह तो बहुत बड़ा दानी है, या यह तो बहुत सेवा करता है। यह तो दिखावे की चाकरी होती है, जैसे कि यदि कोई पत्थर की नाव पर बैठ जाए तो फिर वह नाव डूब जाती है। अपने आपको मार कर यानि कि मुर्दे के समान समझ कर यदि सेवा करे तो ही सेवा लेखे में पड़ा करती है।

अबे तबे की चाकरी किउ दरगह पावै ॥
पथर की बेड़ी जे चड़ै भर नालि बुडावै ॥
अंग - 420

गुर की सेवा सो करे जिसु आपि कराए ॥
नानक सिरू दे छूटीऐ दरगह पति पाए ॥
अंग - 421

महाराज जी कहने लगे, भाई धिंग! संगत की जो सेवा की जाती है, उससे गुरू प्रसन्न हो जाता है और यदि सेवा न करे तो फिर फल नहीं मिला करता है। गुरसिक्ख के लिए यही शिक्षा है और भक्ति की प्राप्ति भी गुरू सेवा से ही होती है। यदि कोई कहे कि मैं घर पर बैठ कर ही भक्ति कर लूँगा तो यह बहुत मुश्किल बात है क्योंकि गुरू जी की तथा संगत की सेवा तो करनी ही पड़ेगी -

जंगम जोध जती संनिआसी गुरि पूरै वीचारी ॥
बिनु सेवा फलु कबहु न पावसि सेवा करणी सारी ॥
अंग - 992

गुरसिखी दा सिखणा गुरमुख साध संगत दी सेवा।
वार भाई गुरदास जी - 28/4

जो अपने निज के लिए कार्य कर रहा है वह हउमै में सेवा कर रहा है, उसने वाहिगुरू को पराया तथा सम्बन्धियों को अपना समझ लिया है। जीव को यह समझ में ही नहीं आता है कि सेवा तथा सिमरन के बिना शेष सारे कार्य फोकट कार्य हैं। यही कारण है कि वह संसार में आकर डूब जाता है। जिस प्रकार से बाजीगर ने जादू दिखला कर राजे को अपनी माया के माध्यम से भुला दिया था, उसी प्रकार से वाहिगुरू जी ने अपनी माया के माध्यम से सारे संसार को भुलाया हुआ है। बाकी जो योगियों के साधन निऊली, भुयंगम आदि हैं, अत्यन्त कठिन साधन हैं और शरीर को अपार कष्ट देने के बाद भी इनके द्वारा समझ नहीं आ पाती है। गुरमति का मार्ग यानि कि सेवा तथा सिमरन का मुख्य मार्ग बहुत ही सरल है, इसमें एक परमात्मा के साथ लिव लग जाती है

और भ्रम की निवृत्ति होकर मन निर्मल हो जाता है।

निवली करम भुअंगम भाठी रेचक पूरक कुंभ करै ॥
बिनु सतिगुर किछु सोझी नाही भरमे भूला बूडि मरै॥
अंग - 1343

सतिगुरू सेवे भरमु चुकाए ॥
अनदिनु जागै सचि लिव लाए ॥
एको जाणै अवरू न कोइ ॥
सुखदाता सेवे निरमलु होइ ॥ *अंग - 1343*

इसलिए भाई धिंग! दुविधा को दूर करके जिस वाहिगुरू जी का नाम जपना है, उसे अपना जानकर सेवा कर तथा यह समझ कर सेवा कर कि परमात्मा या वाहिगुरू मेरे साथ ही रहता है। वह स्वयं ही एक से अनेक हुआ है तथा सारे रूप उसी के हैं, लेकिन माया का पर्दा होने का कारण सारा संसार भूला हुआ है, उसे कण-कण में व्याप्त जानकर वाहिगुरू-वाहिगुरू कहते जाओ, यह शब्द तुम्हें उस शब्द के साथ मिला देगा जिसके बारे में गुरू जी कहते हैं -

दुबिधा चूकै ताँ सबदु पछाणु ॥
घरि बाहरि एको करि जाणु ॥ *अंग - 1343*

गुरू महाराज जी ने भाई धिंग को उपदेश दे दिया और अब वह दिन रात सेवा करने लग पड़ा, साथ ही वह बन्दगी भी करता है। जिसके अन्दर दृढ़ता हो, बन्दगी करके, उसे देर नहीं लगा करती है। धीरे-धीरे उसे शब्द ने उस जगह पर पहुँचा दिया, जहाँ पर कि ख्याल पूर्णतः समाप्त हो जाते हैं और जिस जगह पर गुरू शब्द के रूप में अन्दर अनहद नाद की गुंजार डाल रहा है, नाम की धुन चल रही है, उस जगह की समझ उसे पड़ गई। वहाँ पर पाँच शब्द की धुनकार पड़ रही है, मन अडोल होकर टिक जाता है तथा निज घर के अन्दर निवास हो जाता है। गुरू महाराज जी ने कृपा करके शरीर रूपी घर में निज घर दिखला दिया, जहाँ पर कि संकल्प-विकल्प समाप्त हो जाते हैं। अब अजपा-जाप स्वतः ही चलना शुरू हो गया और भाई धिंग की अब सहज-समाधि प्रत्येक समय लगी रहती है।

घर महि घरू देखाइ देइ सो सतिगुरू पुरखु सुजाणु ॥
पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु ॥
दीप लोअ पाताल तह खंड मंडल हैरानु ॥
तार घोर बाजिंत्र तह साचि तखति सुलतानु ॥
सुखमन कै घरि रागु सुनि सुंनि मंडलि लिव लाइ ॥
अकथ कथा बीचारीऐ मनसा मनहि समाइ ॥
उलटि कमलु अंम्रिति भरिआ इहु मनु कतहु न जाइ॥
अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ ॥
सभि सखीआ पंचे मिले गुरमुखि निज घरि वासु ॥
सबदु खोजि इहु घरू लहै नानकु ता का दासु ॥
अंग - 1291

उसे वह घर प्राप्त हो गया जो कि बड़े-बड़े महापुरुषों को प्राप्त हुआ करता है। वह चित्त लगाकर सेवा करता है और किसी प्रकार का प्रदर्शन भी नहीं करता है कि मैं सेवा करता हूँ। वह नम्रता व आधीनगी में रहता है चाहे कोई कुछ भी कहता रहे चाहे कोई विरोध करता रहे लेकिन वह सदैव हाथ ही जोड़ कर रखता है। वस्त्र धोता है, बर्तन साफ करता है, स्नानार्थ पानी गर्म करता है तथा महाराज जी की मुट्ठी-चापी भी करता है। एक दिन सेवा में इतना मस्त हुआ कि काम पर जाना ही भूल गया। काम यह था कि इसके जजमान के घर शादी थी और उसका सारा काम इसी ने करना था तथा बहुत सारी जिम्मेदारी इसके सुपुर्द थी जैसे कि काम करने वालों को बुलाना, भाईचारे को निमन्त्रण देना आदि। पहले दिन ही इन कामों के बारे में इसे समझा दिया गया था कि भाई धिंग! तुमने ये सारे कार्य करने हैं लेकिन यह सेवा में इतना मस्त हुआ कि यह शादी वाले उस काम पर जाना ही भूल गया यानि कि अपने उस उत्तरदायित्व से गैर हाजिर हो गया। प्रेमीजनो! जो सारे खण्डों व ब्रह्मांडों का स्वामी वाहिगुरू है, वह कोई पत्थर की मूर्ति नहीं है बल्कि वह तो विशुद्ध प्यार ही प्यार है, विशुद्ध जीवन ही जीवन है। उस समय प्रभु जी ने अपने स्वभाव व नियम के मुताबिक अपने प्यारे की लाज रखी तथा धिंग का रूप धारण करके शादी के सारे कार्य करने के लिए उसके स्थान पर पहुँच गया -

हरि जुगु जुगु भगत उपाइआ
पैज रखदा आइआ राम राजे ॥ *अंग - 451*

अपुने सेवक की आपे राखै आपे नामु जपावै ॥
जह जह काज किरति सेवक की तहा तहा उठि धावै॥
सेवक कउ निकटी होइ दिखावै ॥
जो जो कहै ठाकुर पहि सेवकु ततकाल होइ आवै ॥
अंग - 403

सभी कह रहे थे कि भाई धिंग! इधर आकर यह कार्य करो, कोई कहता कि अमुक कार्य करो। वह किसी को भी जवाब नहीं देता कि मैं पहले यह कार्य तो कर लूँ अपितु वह विजली की सी फूर्ती से सारे कार्य करता रहा। सभी हैरान थे कि यह इधर भी कार्य करता नजर आ रहा है और उधर भी दिखाई पड़ता है। साथ ही यह भी कह रहा है कि मैं सबको निमन्त्रण भी दे आया हूँ। सारी वस्तुएँ भी ला दी हैं। दाल सब्जियाँ भी बना रहा है तथा लंगर आदि भी तैयार करवा रहा है। घर वाले सदस्य पूछते हैं कि अमुक कार्य हो गया? यह कहता है कि हाँ जी हो गया है। घर वाले स्वयं हैरान हैं

कि हम जो भी कार्य इसे कहते हैं वही तैयार पड़ा होता है। वे जिधर भी देखते हैं भाई धिंग उधर ही दिखाई पड़ता है। विवाह से सम्बन्धित सारे कार्य भी सुचारु रूप से चल रहे हैं और कोई भी कार्य गलत नहीं हुआ है। किसी को समझ में नहीं आ रहा है कि व्यक्ति तो एक है लेकिन काम सभी होते जा रहे हैं। दरअस्ल यह रहस्यात्मक बात किसी को भी पता नहीं है कि इसकी दोस्ती तो सारी सृष्टि के स्वामी के साथ पड़ी हुई है और वही भाई धिंग का रूप धारण करके सारे कार्य कर रहा है। उधर भाई धिंग गुरू महाराज जी की सेवा में मस्त है, उसे तो शादी के कार्यों के बारे में तनिक भी ख्याल नहीं है। वह तो भूल ही गया है कि मुझे अमुक शादी में जाना था। जब वह सेवा से मुक्त हुआ तो उसे ख्याल आया कि ऐ मन! आज क्या होगा? उसने तो सारे कार्य मेरे सुपुर्द किए हुए थे? अब मैं उसे क्या जवाब दूँगा? अब वह विवाह वाले घर पहुँच जाता है। क्या देखता है कि वहाँ पर तो सारे कार्य पहले से ही हुए पड़े हैं और सब लोग उसे वाह-वाह कर रहे हैं, सभी कहते हैं कि भाई धिंग! तुम्हारे पास क्या कोई जादू है? आज तो तुमने कमाल ही कर दी है, आज तो तुम कई स्वरूप धारण करके सेवा कर रहे थे। हम सबने अपनी आँखों से देखा है कि तुम दौड़-दौड़ कर इधर-उधर सारे कार्य कर रहे थे। यह सुनकर भाई धिंग झट से समझ गया कि यह वही लीला घटित हो गई है जो कि भक्त सैण जी के साथ घटित हुई थी। प्रभु जी के इस करिश्मे को भाई धिंग ने अपने अन्दर ही जज्ब कर लिया और उसने इसके बारे में किसी से कोई बात नहीं की कि प्रभु जी ने उसकी इस प्रकार से लाज रखी है। वह गुरू जी के पास आकर पूर्ववत सेवा करता रहा। विवाह के बाद घर वाले मिठाई लेकर आए और सारे गुरू जी को कहने लगे महाराज जी! भाई धिंग ने हमारे विवाह के दौरान बहुत अधिक सेवा की है। हमें तो उस दौरान पता ही नहीं चल पाया कि भाई धिंग अकेला था यह इसके साथ कई लोग थे। इसे जहाँ भी देखते थे वहीं पर भाई धिंग बनकर यह सेवा कर रहा होता था। हम जो भी कार्य इसे करने के लिए कहते थे, यह उसी कार्य को तुरन्त कर देता था। गुरू महाराज जी ने जब अन्तर्ध्यान होकर देखा तो आप अपने सिक्ख पर बहुत प्रसन्न हुए कि यह इतनी बड़ी लीला को निःशब्द होकर सहन कर गया और इसने इस बारे में किसी से कुछ भी नहीं कहा। इसके मन में अब गुरू का ध्यान व तत्व ज्ञान दृढ़ हो गया है, भ्रमों का नाश हो गया है और अब यह काल के मण्डल को पार कर गया है तथा यह नाम रस में डुबकी लगाने वाला बन गया है। इसके अन्दर अब ज्योति पूर्ण तौर पर प्रकाशित हो गई है तथा यह परम पदवी पर पहुँच गया है।

मन महि सतिगुर धिआनु धरा ॥
दिड़िओ गिआनु मंतु हरि नामा
प्रभ जीउ मइआ करा ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
काल जाल अरू महा जंजाला छुटके जमहि डरा ॥
आइओ दुख हरण सरण करूणापति
गहिओ चरण आसरा ॥ 1 ॥
नाव रूप भइओ साधसंगु भव निधि पारि परा ॥ अपिउ
पए गतु थीओ भरमा कहु नानक अजरू जरा॥

अंग - 701

उस समय गुरू जी अत्यन्त प्रसन्न हो गए और आपने भाई धिंग को अपने आलिंगन में ले लिया और आपने वचन किया, मेरे प्यारे सिक्ख निहाल! निहाल! तुम धन्य हो। तुम स्वयं भी भवजल से पार हो गए हो और तुमने अपने कुलों का भी उद्धार कर दिया है। तुम्हारा संसार पर आना धन्य हो गया है। उसकी सहन शक्ति को देखकर गुरू जी ने उसे ब्रह्मज्ञान तथा रिद्धियों-सिद्धियों के भण्डार प्रदान कर दिए एवं उसकी समस्त शंकाओं की निवृत्ति कर दी। गुरसिक्ख ने अपने आप को बेचकर सेवा की, बन्दगी की, जिसके फलस्वरूप उसकी शंकाओं की निवृत्ति हो गई तथा उसके अज्ञान का नाश हो गया। उसे अब वह अटल पदवी प्राप्त हो गई जिसे प्राप्त करने के बाद यह जीव दोबारा संसार में नहीं आता है। उसका स्वयं का तो उद्धार हो ही जाता है साथ ही जो जिज्ञासु व साधकगण उसका ध्यान रखते हैं वे भी पार हो जाते हैं। गुरू साहिब कहने लगे, भाई धिंग! अब तेरा और मेरा कोई फर्क नहीं रह गया है, अब 'तुम', 'मैं' बन गए हो और 'मैं' 'तुम' बन गए हो। जब 'मैं' समाप्त हो जाए तो उस समय फिर केवल परमेश्वर ही शेष रह जाता है। 'मैं' के कारण ही यह जीव वाहिगुरू से दूर रहता है, जहाँ पर मैं हो तो फिर वहाँ पर वाहिगुरू का निवास नहीं होता है और जब 'मैं' समाप्त हो जाती है, तब फिर शरीर में तू का निवास हो जाता है।

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही ॥
अनल अगम जैसे लहरि मइ ओदधि
जल केवल जल माँही ॥

अंग - 657

वैसे तो पहले भी परमेश्वर ही था लेकिन संसार के विकारों की हउमै रूपी लहरों के कारण पर्दा पड़ा हुआ था। जिस प्रकार से समुद्र का पानी लहरों तथा झाग के बुलबुले बनकर पृथक रूप में दिखाई पड़ता है, जबकि वास्तव में तो वह भी पानी ही है। अब ब्रह्मज्ञान अमृत प्राप्त हो गया और संसार रूपी विकारों की शंकाएँ समाप्त हो गईं तथा अन्दर व बाहर यानि कि घट-घट में प्रभु जी के दर्शन हो

रहे हैं। ऐसा इसलिए सम्भव हो सका क्योंकि उसने स्वयं को बेचकर यानि कि स्वयं को शत प्रतिशत समर्पित कर दिया।

इहु संसारू बिकारू संसे महि
तरिओ ब्रहम गिआनी ॥ *अंग - 13*

ठाकुर तुम् सरणाई आइआ ॥
उतरि गइओ मेरे मन का संसा
जब ते दरसनु पाइआ ॥ *अंग - 1218*

आरम्भ में विनती की थी कि शंका के कारण ही हम जन्म-मरण के चक्रव्यूह में फँसे हुए हैं। अन्धकार के कारण जिस रस्सी को साँप समझ कर डरते थे, प्रकाश होने पर पता लगा कि यह तो रस्सी ही थी, हम लोग तो वैसे ही डरते रहे। इसी प्रकार से जब 'गुरु-शब्द' के अभ्यास के माध्यम से ज्ञान का प्रकाश हो गया तो फिर ज्ञात हुआ कि यहाँ पर तो दूसरा कोई है ही नहीं, अपितु यहाँ पर तो घट-घट में वाहिगुरू ही व्याप्त है -

सभ महि एकु वरतदा जिनि आपे रचन रचाई ॥
अंग - 954

गुरमती घटि चानणु होआ
प्रभु रवि रहिआ सभ थाई राम ॥ *अंग - 770*

अतः यह गुरमति का सिद्धान्त है और इसकी अन्तिम सीढ़ी पर पहुँचने के लिए नियम व मर्यादाएँ हैं, जिन्हें धारण करके शंकाएं समाप्त हो जाती हैं, अज्ञान का नाश हो जाता है। जिसने पार होना है, वह इसे धारण करो। जो अभी किनारे पर खड़े-खड़े सोच रहे हैं, वे चल पड़ो। समय को बरबाद न करो क्योंकि निकल चुका समय वापिस नहीं आया करता है। जिस दिन हमने संसार से वापिस जाना है, वह दिन भी एक दिन आ ही जाना है, फिर उस समय हमारे पल्ले केवल पाश्चाताप ही रह जाएगा, यदि सेवा, सिमरन कर लेते तो अच्छा ही था।

जो किछु करहि सोई अब सारू ॥
फिरि पछुताहु न पावहु पारू ॥ *अंग - 1159*

निःशंक रूप से मंजिल बहुत दूर है, लेकिन यह नजदीक भी है। अन्दर ही अन्दर युद्ध है। बस स्वयं को गुरू के पास बेचकर गुरमति को धारण कर लो। जो विधिपूर्वक सेवा करेगा, सिमरन करेगा, विधिपूर्वक गुरू का गुलाम बनेगा उसे यह परम पदवी प्राप्त हो जाएगी, बशर्ते उसके अन्दर प्रभु प्रियतम को मिलने की लालसा व शौक हो।

'चलता'

(पृष्ठ 9 का शेष)

पिरू घरि नही आवै धन किउ सुखु पावै
बिरहि बिरोध तनु छीजै ॥
कोकिल अंबि सुहावी बोलै किउ दुखु अंकि सहीजै ॥
अंग - 1107

जिस स्त्री का प्रभु रूपी पति हृदय रूपी घर में नहीं आता है, उसे आत्मिक आनन्द कैसे मिल सकता है? प्रभु जी से बिछुड़ा हुआ शरीर कामादिक दुश्मनों के चंगुल में फँस कर कमजोर हो जाता है (चैत्र के माह में)। कोयल आम के वृक्ष पर बैठकर मीठे-मीठे बोल बोलती है लेकिन वियोगिन को ये मीठे बोल अत्यन्त दुखदाई प्रतीत होते हैं क्योंकि बिछोड़े का दुख उसके लिए और भी अधिक दुखदाई होने लगता है।

भवरू भवंता फूली डाली किउ जीवा मरू माए ॥
नानक चेति सहजि सुखु पावै
जे हरि वरू घरि धन पाए ॥ *अंग - 1107*

निःशंक रूप से इस मौसम में भ्रमर फूलों के चारों तरफ घूमते हुए खुशियों भरा संगीत गाते हैं लेकिन बिछोड़े में मेरा दुखी मन इस खुशी के समय का आनंद कैसे उठा सकता है? हे मेरी माँ! यह बिछोड़ा मेरे लिए मर जाने के सदृश्य है। हे नानक! यदि हरि रूपी पति, जीव रूपी स्त्री के हृदय रूपी घर में प्रकट हो जाए तो फिर जीवात्मा रूपी पत्नी को सहज सुख की प्राप्ति हो जाती है।

भावार्थ यदि प्रभु रूपी पति, जीव रूपी स्त्री के हृदय रूपी घर में बस जाए तो फिर उसे अविनाशी सुखों की प्राप्ति हो जाती है। श्री गुरू अंगद देव जी का फुरमान है -

नानक तिना बसंतु है जिन् घरि वसिआ कंतु ॥
जिन के कंत दिसापुरी से अहिनिसि फिरहि जलंत ॥
अंग - 791

श्री गुरू अमरदास जी इस भाव को प्रकट करते हुए फुरमान करते हैं कि -

नानक तिना बसंतु है
जिना गुरमुखि वसिआ मनि सोइ ॥
हरि वुठै मनु तनु परफड़ै सभु जगु हरिआ होइ ॥
अंग - 1420

अर्थात यदि परमेश्वर के साथ ध्यान जुड़ जाए यानि कि यदि परमेश्वर से एकत्व प्राप्त हो जाए तो फिर मनुष्य जन्म बसन्त की बहार की भांति आनन्द भरपूर हो जाता है।

नामु प्रभू का लागा मीठा

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

काइआ रंङणि जे थीअै पिआरे पाईअै नाउ मजीठ ॥
रंङण वाला जे रंङै साहिबु अैसा रंगु न डीठ ॥ 2 ॥
जिन के चोले रतड़े पिआरे कंतु तिना कै पासि ॥
धूड़ि तिना की जे मिलै जी कहु नानक की अरदासि॥
अंग - 722

सिम्रिति बेद पुराण पुकारनि पोथीआ ॥
नाम बिना सभि कूड़ु गाली होछीआ ॥ अंग - 761

साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो ॥
जिना भाग मथाहि से नानक हरि रंगु माणदो ॥
अंग - 81

बेद पुरान सिंम्रिति सुधाखर ॥
कीने राम नाम इक आखर ॥
किनका एक जिसु जीअ बसावै ॥
ता की महिमा गनी न आवै ॥
काँखी एकै दरस तुहारो ॥
नानक उन संगि मोहि उधारो ॥ अंग - 262

गुरू दरबार में शोभायमान परम सम्माननीय साधु संगत जी! आओ ख्यालों को बाहर जाने से रोकने का प्रयत्न करें, चित्त वृत्तियों को एकाग्र करें। रसना की पवित्रता के लिए सारे ही उच्चारण करें जी - सतिनाम श्री वाहिगुरू। पातशाह जी की अपार कृपा है कि सारा दोआबा का क्षेत्र प्रत्येक माह एकत्र होकर सत्संग करता है। गुरू-प्यार में सराबोर आत्माओं का दीदार व सत्संग यहाँ पर महापुरुषों ने शुरू किया। दोआबा में बाबा गुरपाल सिंह जी की ड्यूटी लगाई कि वे घर-घर व नगर-नगर जाकर सत्संग के प्रवाह को चलाएँ -

सतसंगति कैसी जाणीअै ॥
जिथै एको नामु वखाणीअै ॥ अंग - 72

नाम जपने वालों को पता है कि केवल और केवल सत्संग में आकर ही -

संतसंगि अंतरि प्रभु डीठा ॥
नामु प्रभू का लागा मीठा ॥ अंग - 293

आन्तरिक बात चलती है। 'नामु प्रभु का लागा मीठा।।' क्योंकि सारी बात अन्दर की है। 'बात अगंम की' महापुरुषों ने सात भागों में पुस्तक लिखी है कि यह कैसी आश्चर्यजनक बात है लेकिन अन्दर सब कुछ पड़ा है -

असथिरू थानु सदा निरमाइलु आपे आपु उपाइदा ॥
अंदरि कोट छजे हटनाले ॥ आपे लेवै वसतु समाले ॥
अंग - 1033

कितना कुछ अन्दर है लेकिन हमें यह बात समझ में नहीं आती है। बाहरी दृश्यों को देखकर हम उन पर मोहित हो जाते हैं। महापुरुष जब भी कोई बात करते, दिल की बात करते तो उनके अनुभव की बातें बाहर निकल कर आया करती थीं। जब आप कुर्सी पर बैठकर वचन किया करते थे तो प्रायः अनुभवी वचन ही श्रद्धालुजनों को सुनने को मिला करते थे। जिज्ञासुजनों की जो भी प्रारब्ध होती थी, वचन उसी के अनुरूप महापुरुषों के मुखारविन्द से बाहर आने लगते।

जब हम सत्संग करते हैं, नाम के साथ जुड़ते हैं तो हमें फिर पता लगता है कि 'सतंसंगि अंतिर प्रभु डीठा।। नामु प्रभु का लागा मीठा।।'

अंम्रितु कउरा बिखिआ मीठी ॥
साकत की बिधि नैनहु डीठी ॥ अंग - 892

यह जो अमृत है यही नाम है -

अंम्रितु हरि हरि नामु है मेरी जिंदुड़ीए
अंम्रितु गुरमति पाए राम ॥
हउमै माइआ बिखु है मेरी जिंदुड़ीए
हरि अंम्रिति बिखु लहि जाए राम ॥ अंग - 538

यह जो विष है यह किस प्रकार से दूर हो पाएगी? एक तो अमृत वह है जो बाहरी तौर पर ग्रहण करवाया जाता है, वह हमें गुरू से प्राप्त होता है। जिसे कि गुरूमन्त्र कहा जाता है। उस मन्त्र की कमाई करनी है -

नामु कहत गोविंद का सूची भई रसना ॥
अंग - 811

यह रसना सुच्ची किस प्रकार से होती है? जैसे कि हमारे जो जूठे बर्तन होते हैं, वे पानी के साथ धोने पर सुच्चे होते हैं, तन को भी पानी का स्नान करवाया जाता है लेकिन मन का स्नान गुरवाणी से ही हो पाता है तथा मन का ही सारा सम्बन्ध है -

ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ ॥
मन ही मन सिउ कहै कबीरा
मन सा मिलिआ न कोइ ॥ *अंग - 342*

मन बहुत ही चंचल है, इसका कुछ भी पता नहीं है कि यह कहाँ पर जाकर रुके वैसे तो यह कहीं पर भी रुकता ही नहीं है। रोकने के लिए तो 'परमेसरि दिता बंना।।' वह बन्ना या सीमा कौन लगा सकता है। 'दूख रोग का डेरा भंना।।' वह बन्ना या सीमा को कौन खींच सकता है? वह है - नाम। गुरवाणी जो है वह नाम के साथ जोड़ती है -

इह बाणी जो जीअहु जाणै तिसु अंतरि रवै हरि नामा॥
अंग - 797

वह नाम के अन्दर स्थित हो तभी इसे पैंखर डाला जा सकता है -

मन खुटहर तेरा नही बिसासु तू महा उदमादा ॥
खर का पैखरू तउ छुटै जउ उपरि लादा ॥
अंग - 815

इसका कोई विश्वास नहीं है लेकिन जब श्वास पर मन्त्र आ गया और उस मन्त्र की कमाई के द्वारा वह उसे नाम तक ले गया तो फिर इसकी स्थिति नाम में हो जाती है।

प्राचीन समयों में आप लोगों ने देखा होगा कि गधों के पैरों में बेड़ियों की तरह से एक पैखर डाला होता था ताकि वह अधिक दौड़ न सके और न ही दुलत्ती मार सके। उस पैखर को तभी खोला जाता था जबकि उसके ऊपर सामान या बोझ लाद दिया जाता था यानि कि जब वह विश्वास हो जाता था कि अब यह नहीं दौड़ पाएगा। मन का स्वभाव भी इसी प्रकार का है, इसीलिए मन की तुलना गधे के पैखर के साथ की जाती है और सबसे पहले मन को ही सुधारना पड़ता है इसे ही नियन्त्रण में लाना होता है। इसे नियन्त्रित करने के लिए गुरू से मन्त्र लो, फिर उसकी कमाई, कमाई वाले पुरुषों के साथ मिलकर करो। जब गुरू का मन्त्र श्वास के माध्यम से इस मन पर सवार हो जाएगा तो फिर इसकी वासनाएँ शान्त हो जाएंगी यानि कि फिर मनोनाश, वासनाक्षय व तत्व ज्ञान की अवस्था आ जाएगी। इसलिए गुरू जी बार-बार इसका जिक्र करते हैं -

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥ *अंग - 262*

फिर मन कहते हैं - याद को यानि कि उसकी याद कैसे रहे? अब याद तभी रहेगी जबकि इसके सामने कोई लक्ष्य हो और उसके ऊपर विश्वास हो, श्रद्धा हो। इसके लिए बड़े महाराज जी (सन्त बाबा ईशर सिंह जी) उदाहरण दिया करते थे कि बिना खूँटी से आप कपड़ा कैसे टाँग पाओगे? अतः कोई न कोई केन्द्र बिन्दु चाहिए। इसी प्रकार से धरती है जिन्होंने भूगोल पढ़ी है उन्हें पता है कि धरती सूर्य से अलग हुई और चन्द्रमी धरती से अलग हुआ। इसी प्रकार से सारे सितारे अलग हुए हैं और यह जो सारा सौर मण्डल है, इसका केन्द्र बिन्दु है - सूर्य। इस केन्द्र के चारों तरफ सारे घूमते हैं, धरती सूर्य के चारों तरफ घूमती है और धरती के चारों तरफ चन्द्रमा घूमता है। इसी प्रकार से सारे ग्रह हैं।

सूरजु एको रूति अनेक ॥
नानक करते के केते वेस ॥ *अंग - 13*

इनके परिवर्तन से कितना कुछ परिवर्तित हो जाता है, धरती सूर्य के नजदीक आ गई तो गर्मी हो जाती है और यदि धरती दूर हो जाती है तो ठंडक हो जाती है। यह जो कैनेडा, साइबेरिया या उत्तरी व दक्षिणी अमेरिका है यह सारा ठंडा ही पड़ा है। वहाँ पर बर्फ जम जाती है। जो भूमध्य रेखा है उसके आस पास सघन जनसंख्या है क्योंकि वहाँ पर गर्मी अधिक पड़ती है। इधर भारत में दक्षिण की तरफ चले जाओ तो उन्हें ठंडक के बारे में पता ही नहीं है। मद्रास, तामिलनाडू आदि में सारा वर्ष गर्मी ही पड़ती रहती है।

जब सुनामी आई थी तो हम लोग वहाँ पर बाढ़ राहत सामग्री लेकर गए थे, उसमें कम्बल वगैरह लेकर गए थे क्योंकि दिसम्बर का महीना था लेकिन उन्हें ठंडक का पता ही नहीं था और उनकी जरूरत तो केवल धोती की ही थी।

वार्ता का तात्पर्य यह है कि जैसे धरती अपने केन्द्र बिन्दु सूर्य के चारों तरफ घूमती है उसी प्रकार से सारे ग्रह चन्द्रमा आदि भी अपने केन्द्र बिन्दु के चहुँओर परिक्रमा करते हैं तथा इसी प्रकार से हम लोग यानि कि आत्माएँ परमात्मा से पृथक हुए हैं, अतः हमें भी अपने मूल श्रोत परमात्मा के चारों तरफ घूमना चाहिए अर्थात उसे सदैव याद रखना चाहिए। उसका नाम जप-जप कर उसे सदैव अपने मन में याद रखना चाहिए। लेकिन हुआ कुछ इस प्रकार से है कि आत्मा का सम्बन्ध जीव के साथ हो गया और यह जीवात्मा बन गई और फिर मन, चित्त, बुद्धि व अहंभाव पर मैल पड़ गई। अब इसे यह पता ही नहीं चल रहा है कि मैं कौन हूँ?

सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ ॥
एती न जानउ केतीक मुदति चलते खबरि न पाइओ॥
अंग - 999

इस यात्रा पर चलते हुओं को कितना समय हो गया है

यानि कि मूल परमात्मा से बिछुड़े हुए कितना समय हो गया है, इसका कुछ भी पता नहीं है। विडम्बना यह है कि यह अपने उदगम स्थान की तरफ यानि कि back to source जाता ही नहीं है। गुरू जी फुरमान करते हैं कि -

केते रूख बिरख हम चीने केते पसू उपाए ॥
केते नाग कुली महि आए केते पंख उडाए ॥
अंग - 156

कई जनम भए कीट पतंगा ॥
कई जनम गज मीन कुरंगा ॥
कई जनम पंखी सरप होइओ ॥
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ ॥ अंग - 176

कितने जन्म बीत चुके हैं कि हम बैल, हाथी, घोड़े, वृक्ष आदि बनते रहे। क्यों बनते रहे? क्योंकि हम जहाँ से टूटे थे वहाँ पर दोबारा जुड़ ही नहीं सके। अन्य योनियों की तो जुड़ने की पात्रता ही नहीं है। एक मनुष्य योनि ही इस बात की पात्र है कि वह सेवा व सिमरन करके परमात्मा से जुड़ सकता है अन्य योनियों के पास तो इस बात की पात्रता ही नहीं है। यथा -

गुर सेवा ते भगति कमाई ॥
तब इह मानस देही पाई ॥
इस देही कउ सिमरहि देव ॥
सो देही भजु हरि की सेव ॥ 1 ॥
भजहु गुोबिंद भूलि मत जाहु ॥
मानस जनम का एही लाहु ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
जब लगु जरा रोगु नही आइआ ॥
जब लगु कालि ग्रसी नही काइआ ॥
जब लगु बिकल भई नही बानी ॥
भजि लेहि रे मन सारिगपानी ॥ 2 ॥
अब न भजसि भजसि कब भाई ॥
आवै अंतु न भजिआ जाई ॥
जो किछु करहि सोई अब सारू ॥
फिरि पछुताहु न पावहु पारू ॥ 3 ॥
सो सेवकु जो लाइआ सेव ॥
तिन ही पाए निरंजन देव ॥
गुर मिलि ता के खुले कपाट ॥
बहुरि न आवै जोनी बाट ॥ 4 ॥
इही तेरा अउसरू इह तेरी बार ॥
घट भीतरि तू देखु बिचारि ॥
कहत कबीरू जीति कै हारि ॥
बहु बिधि कहिओ पुकारि पुकारि ॥ अंग - 1159

अब यहाँ देख लो कि कितना बड़ा संसार है, लेकिन कितने लोग ऐसे हैं जिन्हें कि परमात्मा से मिलने की समझ आ पाई है? बहुत ही कम है -

जग महि उतम काढीअहि विरले केई केइ ॥
अंग - 517

हैनि विरले नाही घणे फैल फकड़ु संसारू ॥
अंग - 1411

अब इसका पता चल ही नहीं पाता है क्योंकि हमारी शिक्षा व्यवस्था जो है यह अपरा विद्या ही हमें सिखाती है, यह हमें परा विद्या के बारे में तो तनिक भी समझ नहीं प्रदान करती है। आन्तरिक शिक्षा या विद्या तो हमें महापुरुषों के पास से ही प्राप्त हो पाती है।

अतः ये जो योनियाँ हैं, ये सभी मनुष्य के अधीन हैं। मनुष्य को यह बड़ाई इसीलिए दी गई है क्योंकि यह नाम स्मरण कर सकता है। यह अपने उदगम स्थान यानि परमात्मा के साथ पुनः जुड़ सकता है। लेकिन यह सब होगा कैसे?

यह आन्तरिक मार्ग है। हम सबने प्रायः पढ़ा है कि नाम-गुरवाणी के ये अक्षर शुद्ध अक्षर हैं।

बेद पुरान सिंम्रिति सुधाखर ॥ अंग - 262

जितने वेद पुराण हैं इन्हें हम झूठे नहीं कह सकते हैं -

बेद कतेब कहहु मत झूठे झूठा जो न बिचारै ॥
अंग - 1350

वेदा महि नामु उतमु सो सुणहि नाही
फिरहि जिउ बेतालिआ ॥ अंग - 919

हम लोग बेताले ही घूम रहे हैं लेकिन हमारी स्थिति नाम में चाहिए। सेवक वही है जो सेवा करने लग गया।

संत की सेवा नामु धिआईऐ ॥ अंग - 265

नाम जो है इसकी अवस्थाएँ हैं - कर्म, उपासना, ज्ञान व विज्ञान। जिस प्रकार से छोटे बच्चे बैखरी वाणी में बोल-बोल कर अपना पाठ याद करते हैं और अध्यापक भी ऊँची आवाज में पढ़ाते हैं और धीरे-धीरे उन बच्चों के मन में वे पाठ बस जाते हैं वह एक लय सी उनके दिमाग में अनायास ही बस जाती है। इसी प्रकार से महापुरुषों ने नाम की एक धुन बनाई जिसे कि उन्होंने सातवें समागम के अवसर पर सार्वजनिक रूप से संगत में प्रकट किया। यथा -

धुनि महि धिआनु धिआन महि जानिआ
गुरमुखि अकथ कहानी ॥ अंग - 879

वैसे तो वह कहानी कही जा सकने वाली नहीं है लेकिन

फिर भी महापुरुषों ने जन कल्याणार्थ एक धुन बनाई है जिसका अभ्यास ब्रह्ममुहुर्त में उठकर करो। अन्दर को श्वास जाता है वा...हि और बाहर को श्वास आता है गु...रु कहो। इसी को कहते हैं 'गगन दमामा बाजिए'। वह गगन मण्डल इस प्रकार का है कि वहाँ केवल एक आवाज है। पहले समयों में जब मन्दिर या गुम्बद बनाए जाते थे तो वहाँ पर एक घंटा बजा करता था। ये सब प्रतीकात्मक चीजें होती हैं, जिन्हें कि महापुरुष जन कल्याणार्थ स्थापित कर दिया करते थे। इस प्रकार जब हम मन्दिर जाते हैं तो वहाँ पर घंटा बजता या शंख बजता। ये सारी चीजें आन्तरिक आवाजों के साथ तालमेल बैठाने के लिए सहायक सिद्ध होती हैं ये बाहर के प्रतीक हैं कि इस प्रकार से अन्दर गुंजार पड़ती है। अब तो मन्दिरों की छत के तौर पर लैंटर ही पड़ने लग पड़े हैं लेकिन पहले गुम्बद बना करते थे उसके अन्दर फिर आवाज घूमा करती थी जिस समय कि घंटा या घड़ियाल बजाता था। अपने यहाँ भी जब कीर्तन किया जाता है तो हार्मोनियम बजाते हैं, तबलावादन होता है। श्री गुरू नानक देव जी प्राय: मरदाना जी को कहा करते थे भाई मरदाना! रवाब बजाओ! बाणी आई है। वाणी परमात्मा के घर से गुरू जी के हृदय में अवतरित हुआ करती थी -

धुर की बाणी आई ॥ तिनि सगली चिंत मिटाई ॥
अंग - 628

इस प्रकार से महापुरुषों के पास युक्तियाँ होती हैं। उन्होंने यह बोलकर बतला दिया अन्यथा वे बतलाते ही नहीं हैं और जन साधारण को पता ही नहीं चल पाता है कि नाम का जप किस प्रकार से करना है। आप पहले बोल-बोल कर वाहिगुरू-वाहिगुरू करवाते रहे, उसके बाद मध्यमा वाणी में, उसके बाद पसन्ती में और आखिर में परा वाणी में यानि कि बिना जिह्वा के ही नाम अभ्यास आप करवाते रहे। यथा -

बिनु जिहवा जो जपै हिआइ ॥
कोई जाणै कैसा नाउ ॥ अंग - 1256

यहाँ पर पहुँच कर न तो होंठ हिलते हैं और न ही जिह्वा हिलती है बल्कि यह तो सुनने की अवस्था है। आप ब्रह्म मुहुर्त में उठो, स्नान करो और श्वासों पर ध्यान लगा लो -

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥
उदमु करे भलके परभाती
इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥ अंग - 305

बाहरी स्नान तो पानी के साथ होते हैं लेकिन जो आन्तरिक स्नान हैं, वह सत्संग व गुरु वचनों को सुनकर तथा उनकी कमाई करके ही हुआ करता है। वह मुख-धूल का स्नान है। इस स्नान का प्रतिफल यह होता है कि -

उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै
सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥ अंग - 305

किलविख पाप कितने हैं?

ब्रहमण कैली घातु कंजका अणचारी का धानु ॥
अंग - 1413

ब्रह्म विचार करने वाले की हत्या कर देनी, गाय की हत्या कर देनी, कंजका (पुत्री) को मार डालना, आदि किलविख पाप हैं। आजकल तो लोग पुत्र वासना के अधीन अन्धे होकर बच्चियों को तो जन्म ही नहीं लेने देते हैं और माता के गर्भ में ही उन्हें मार डालते हैं -

चार बज्र कुरहितें हैं -

हुक्का, हजामत, हलाल और हराम।

इस प्रकार के पाप, व्यक्ति को लग जाते हैं। व्यक्ति सोचता है कि ये पाप उतर जाएँगे लेकिन ये नहीं उतरते हैं। हाँ ये पाप तभी उतर सकते हैं जबकि आन्तरिक तीर्थ में स्नान की युक्ति मिल जाएगी और उसका बखूबी पालन करेगा। वास्तविकता यह है कि व्यक्ति विभिन्न प्रकार के पापों में प्रवृत्त होकर उन्हें करता ही चला जाता है जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के जज्बे हैं, पाँच ठग - राज, माल, रूप, जाति व यौवन हैं। इनके अधीन होकर यह पापों की दलदल में धँसता ही चला जाता है -

राजु मालु रूपु जाति जोबनु पंजे ठग ॥
एनी ठगीं जगु ठगिआ किनै न रखी लज ॥
अंग - 1288

मन मेरे भूले कपटु न कीजै ॥
अंति निबेरा तेरे जीअ पहि लीजै ॥
छिनु छिनु तनु छीजै जरा जनावै ॥
तब तेरी एक कोई पानीओ न पावै ॥ 2 ॥
कहतु कबीरू कोई नही तेरा ॥
हिरदै रामु की न जपहि सवेरा ॥ अंग - 656

इस प्रकार से जब हम इसी संसार को सत्य मान बैठते हैं तो फिर संसार के पीछे लगकर इस प्रकार पाप हो जाते हैं। इस प्रकार से हमारा चरित्र गिर जाता है। नाम, दान, स्नान दृढ़ कर लो क्योंकि ऐसा करके ही हमारा जीवन सफल हो सकता है क्योंकि -

उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै
सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥

फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै
बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै ॥
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरू मनि भावै ॥ *अंग - 305*

जब भजन बन्दगी करते-करते अभ्यास बढ़ जाता है तो फिर -

की पढ़ाई चलती है। फिर सामने पुस्तक खुली होती है और आन्तरिक आँखों के साथ देखकर वह दिमाग में जाती रहती है। परा वाणी में पहुँच कर नाभि पर जोर देने से इसका आभास होता है -

सासि सासि सिमरहु गोबिंद ॥
मन अंतर की उतरै चिंद ॥ *अंग - 295*

सबसे पहले अपने मन को बाहरी ख्यालों से रोकना है। मन को टिकाने के लिए जब श्वास पर, गुरू का मन्त्र सवार हो गया तो फिर इस जीव की रूहानी अवस्था का उत्तरोत्तर विकास होता जाता है। मन की सवारी है - पवन। 'इहु मन उडन पंखेरु बन का' महापुरुषों के पास युक्तियाँ होती हैं, वे युक्तियाँ बतला देते हैं कि भद्रपुरुष! तुम इस प्रकार से आगे बढ़ते जाओ। वे बता देते हैं कि जब श्वास अन्दर की तरफ जाता है तो इसे खाली न जाने दो और इस पर वाहिगुरू मन्त्र को सवार कर दो और जब श्वास बाहर को आना है तो भी इस पर वाहिगुरू सवार रहे। ब्रह्म मुहुर्त में खाली पेट होता है और दिमाग पर भी बोझ नहीं होता है, इस समय सीधे बैठकर श्वास के माध्यम से गुरुमन्त्र का जप करो। इस प्रकार से जप करने में कितना आनन्द आता है, इस बारे में गुरू जी कथन करते हैं कि -

बिनु जिहवा जो जपै हिआइ ॥
कोई जाणै कैसा नाउ ॥ *अंग - 1256*

इस आनन्द को तो कथन करना भी अत्यन्त मुश्किल है, बस यह तो अनुभव का विषय है। हमें इस पर विचार करनी चाहिए क्योंकि महापुरुषों ने तो सारे भण्डार खोल कर रख दिए हैं। ये पुस्तकें हैं, आत्म मार्ग मैगजीन है, उनकी ऑडियो-वीडियो कैसेट्स हैं, इंटरनैट है, इनका लाभ उठाओ क्योंकि आन्तरिक मार्ग पर चलने के लिए महापुरुषों का उपदेश अत्यन्त कारगर सिद्ध होता है अतः इन्हें पढ़ो, विचारो और जीवन को सफल करो क्योंकि -

संतसंगि अंतरि प्रभु डीठा ॥

आन्तरिक खेल को महापुरुषों के सहयोग से ही देखा जा सकता है। गुरू जी का कथन है -

बाहरि ढूढन ते छूटि परे
गुरि घर ही माहि दिखाइआ था ॥ *अंग - 1002*

महापुरुष अपने जीवन के अन्तिम समय में कहा करते थे कि सत्संग कोई मनोरंजन का साधन नहीं होता है कि मन को लुभाने के लिए यहाँ पर कोई एकत्रता की जाती है -

लोगु जानै इहु गीतु है इहु तउ ब्रहम बीचार ॥
अंग - 335

यहाँ पर तो जो विचार की जाती है यह तो ब्रह्म की विचार की जाती है -

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ ॥
आतम पसारा करणहारा प्रभ बिना नही जाणीऐ ॥
अंग - 846

यहाँ पर तो सब कुछ ब्रह्म ही है। बेद व्यास जी कथा कर रहे हैं और कथा में आ गया कि यह सारा संसार तो नाशवान है यानि कि हम जो कुछ भी देखते हैं यह सब कुछ नाश हो जाने वाला है। वहाँ पर क्या लीला घटित हुई कि एक हाथी आ गया जो कि सब को उठा उठा कर मार रहा है। यह हाथी अभ उधर सत्संग स्थल की ओर ही आ गया और वेद व्यास जी सबसे पहले उठकर दौड़ लिए। लोग कहने लगे, महात्मा जी! अभी तो आप कह रहे थे कि यहाँ पर तो सब मिथ्या ही है? वेद ब्यास जी कहने लगे जब हाथी ही सीधा आ गया तो यहाँ पर अब दौड़ना भी मिथ्या ही है। यदि कहो कि यहाँ पर सब मिथ्या है तो दौड़ जाना भी मिथ्या ही है। गुरू जी फुरमान करते हैं कि यहाँ पर सब कुछ मिथ्या तो है लेकिन कोई चीज यहाँ पर सत्य भी है। वह सत्य क्या है?

नामु रहिओ साधू रहिओ रहिओ गुरू गोबिंदु ॥
कहु नानक इह जगत मै किन जपिओ गुर मंतु ॥
अंग - 1429

जिसने गुरमन्त्र की कमाई करके नाम तक अपनी पहुँच बना ली है, वह सत्य है। अतः इसी अवस्था की तरफ हमने भी जाना है।

वाहिगुरू जी का खालसा
वाहिगुरू जी की फतहि।

होला महल्ला

(मार्च 2, 2018)

डा. जगजीत सिंह

दसवें पातशाह श्री गुरु गोबिन्द सिंह महाराज जी ने संवत् 1757 (सन् 1700 ई.) के चैत्र मास के आखिरी सप्ताह में श्री आनन्दपुर साहिब के किला होलगढ़ में एक महान दीवान सजाया जिसमें अनेक आदेशों के अनुसार दूर व नजदीक की संगत शस्त्र-वस्त्र सजाकर, घोड़े-हाथियों पर सुशोभित होकर शूरवीर खालसा, निहंग फौजें, गतका खेलना वाले युवा विशेष रूप से शामिल हुए। दीवान को सम्बोधित करते हुए गुरु महाराज जी ने रंगों के त्यौहार 'होली' को 'होला-महल्ला' में परिवर्तित करने की घोषणा की तथा फुरमान किया कि सन्त सिपाही खालसा 'होला-महल्ला' वाले दिन युद्ध कौशल के क्रियाकलाप, कृपाण के जौहर, गतके के पैंतरे, चक्रों की कला, घुड़सवारी, नेजाबाजी आदि का प्रदर्शन किया करेगा। परिणाम स्वरूप 'होली' का यह त्यौहार होला महल्ला के रूप में यानि कि खालसे के वीर-रसी प्रदर्शनी तथा रंगों-गुलालों के आनन्द के त्यौहार में परिवर्तित हो गया।

पृष्ठभूमि - होली का सम्बन्ध हिरण्याकश्यप के साथ जोड़ा जाता है जो अहंकार के वशीभूत होकर सारी प्रजा से ईश्वर की जगह पर अपनी ही पूजा करवाने के लिए बजिद था लेकिन उसका अपना पुत्र ही उससे बागी हो गया, फलस्वरूप वह अपने पिता की नहीं अपितु परमात्मा की पूजा में जुड़ा रहता था। जले हिरण्याकश्यप, थले हिरण्याकश्यप, है भी हिरण्याकश्यप, होगा भी हिरण्याकश्यप कहने की जगह वह जले हरी, थले हरी का ही उच्चारण किया करता था। हिरण्याकश्यप इस विद्रोही बालक को सबक सिखाना चाहता था। उसकी बहन होलिका (होली, ढूंडा) को वर प्राप्त था कि उसे आग नहीं जला सकती। अतः हिरण्याकश्यप ने प्रहलाद को होलिका की गोद में देकर जलती हुई प्रचंड ज्वाला के बीच बैठा दिया, जिसमें होलिका तो जल गई जबकि बालक प्रहलाद का कुछ भी नहीं बिगड़ा। इसका प्रमाण गुरवाणी में भी मिलता है -

हरि जुगु जुगु भगत उपाइआ
पैज रखदा आइआ राम राजे ॥
हरणाखसु दुसटु हरि मारिआ प्रहलादु तराइआ ॥
अहंकारीआ निंदका पिठि देइ नामदेउ मुखि लाइआ॥
जन नानक ऐसा हरि सेविआ अंति लए छडाइआ॥

अंग - 481

इस प्रकरण के कारण ही आग जलाने का रिवाज चला तथा खुशी के तौर पर एक दूसरे पर रंग डाले गए। धीरे-धीरे इस त्यौहार में गिरावट आनी शुरू हो गई और इसे मनाने के तौर-तरीके बदल गए, रंगों के स्थान पर लोग प्रत्येक प्रकार का कूड़ा कर्कट व गन्दी चीजें एक दूसरे पर फैंकने लग पड़े। फिर धीरे-धीरे इसे शूद्रों का त्यौहार कहा जाने लग पड़ा। तीन-चार दशक पहले तक होली के दिनों में किसी का अपने घर से बाहर निकलना मुसीबत मोल लेने के सदृश्य था। रेलगाड़ियों, बसों, ट्रकों तथा अन्य यातायात के साधनों को कीचड़, गन्दगी व रंगों से गन्दा कर दिया जाता था। लोग शराब आदि पीकर गली-बाजारों में हुल्लड़बाजी करते रहते लेकिन समय के अन्तराल से कुछ समझ पैदा हुई है, कुछ सुधार हुआ है।

होली एक मौसमी त्यौहार भी है। चैत्र का महीना बसन्त-बहार का सुहावना खुशियों भरा महीना माना जाता है। चैत्र के महीने से पहले पौष व माघ के महीनों में पाला व तुषार के कारण पतझड़ छाया रहता है अर्थात सर्वत्र उदासी का ही वातावरण रहता है। बसन्त ऋतु में प्रकृति पुलकित होती है, पेड़-पौधों व लताओं में नई कोपलें फूटती हैं और चहुँओर हरियाली ही हरियाली दृष्टिमान होती है। इस प्रकार से होली को बहार के मौसम के तौर पर भी मनाया जाता है। श्री गुरु जी ने इस सुहावनी ऋतु को प्रभु प्यार व भक्ति के लिए बहुत ही उत्तम व योग्य माना है। गुरवाणी में बाह्य कच्चे व फीके रंगों की होली खेलने के स्थान पर प्रभु जी के पक्के व मजीठ रंग में रंगे जाने की प्रेरणा की है -

राम रंगु कदे उतरि न जाइ ॥
गुरु पूरा जिसु देइ बुझाइ ॥ *अंग - 194*

काइआ रंङणि जे थीऐ पिआरे पाईऐ नाउ मजीठ ॥
रंङण वाला जे रंङै साहिबु ऐसा रंगु न डीठ ॥

अंग - 722

नाम रंग पक्का मजीठी रंग है, जो कि कभी भी उतरता नहीं है लेकिन यह केवल गुरु की कृपा के द्वारा ही चढ़ता है-

हरि नामा हरि रंङु है हरि रंङु मजीठै रंङु ॥
गुरि तुठै हरि रंगु चाड़िआ फिरि बहुड़ि न होवी भंङु॥

अंग - 731

इस होली को प्रभु प्यार में, नाम रंग में, रंग कर नाम रसिक सन्तजनों व महापुरुषों की संगत व सान्निध्य प्राप्त करके व नाम-स्मरण के रंग में रंग कर मनाते हैं -

आजु हमारै बने फाग ॥ प्रभ संगी मिलि खेलन लाग॥
होली कीनी संत सेव ॥ रंगु लागा अति लाल देव॥
अंग - *1180*

दरअस्ल पन्द्रहवीं शताब्दी में श्री गुरु नानक देव जी द्वारा संचालित सिक्ख धर्म एक क्रान्तिकारी लहर थी जिसने भारतीय समाज के नकारात्मक धार्मिक व सामाजिक विश्वासों व रीति रिवाजों के घने अन्धकार को ज्ञान की रौशनी के साथ दूर करने का यत्न किया। अनेकों देवी देवताओं की पूजा व पारस्परिक वैर-विरोध, वर्ण-विभाजन तथाकथित छोटी जातियों व मेहनतकश जातियों जैसे नाई, छींबे, धोबी, लोहार, बढ़ई, मिस्त्री आदि के प्रति घृणा व छूतछात, पण्डित-पुरोहित वर्ग की अहंकार भावना तथा ऊपर से कई शताब्दियों तक राजनैतिक गुलामी ने लोगों में स्वाभिमान वाला जीवन जीने का उत्साह व भावना ही समाप्त कर दी थी। श्री गुरु नानक देव जी तथा दसों गुरुओं ने इस शक्तिहीन व बिखरे हुए समाज को सच्चे व सुच्चे सामाजिक मूल्य प्रदान किए, सबको एक परमात्मा की भक्ति में जोड़ा, एक पंक्ति में बिठाकर सांझे लंगर की प्रथा चलाई। आपने एक संगत के रूप में सबको जोड़कर एक प्रभु की आराधना करने की रीति चलाई। आपने स्त्री को गुरू, भक्त व शूरवीर की जननी कहकर सम्मान प्रदान किया, नवीन व सुदृढ़ समाज का सृजन किया, जिसकी रक्षार्थ गुरुओं ने, साहिबजादों ने तथा गुरसिक्खों ने अपने प्राणों के बलिदान दिए। सन् 1699 ई. की बैसाखी इस लहर का शिखर था, जिस समय खालसा पन्थ का सृजन हुआ। अब खालसे को नया रूप, नया बिबास, नई वेश-भूषा, सन्त सिपाही का चरित्र, आत्म रक्षा व मजलूमों की रक्षा का गौरव प्रदान किया। खालसे में आजादी व बुलन्दावस्था का अहसास उत्पन्न करने के लिए उनके रीति-रिवाजों व उनकी शब्दावली बोलने के तरीके भी बदल दिए। खालसे को 'वाहिगुरु जी का खालसा' कहकर उसे सम्मान प्रदान किया। 'वाहिगुरु जी की फतह' के द्वारा खालसे को प्रत्येक मैदान में जीत का आशीर्वाद दिया। उनके दिन, त्यौहार, रीति रिवाज आदि सब में नवीन दृष्टिकोण का समावेश किया। होली को भी इसी प्रकरण में होला महल्ला का रूप प्रदान कर दिया -

औरन की होली मम होला।
कययो किपा निधि बचन अमोला॥ महान कोश

भाई कान्ह सिंह नाभा के अनुसार होला महल्ला का भाव है - हमला तथा जाप हमला, हल्ला तथा हल्ले की जगह। श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी साहिब ने खालसे को शस्त्र व युद्ध विद्या में निपुण करने के लिए यह रीति चलाई थी कि दो दल बनाकर मुख्य सिंहों की कमान के नीचे एक विशेष जगह पर कब्जा करने के लिए हमला करना। कलगीधर स्वयं इस स्वनिर्मित युद्ध के कर्तव्य देखते तथा दोनों दलों को शुभ शिक्षा भी प्रदान करते थे तथा जो दल कामयाब हो उसे दीवान में सिरोपाओ (सम्मान चिन्ह) प्रदान करते। खालसे के अन्दर स्वतन्त्रता, स्वाभिमान व वीरता का अंश भरने के लिए गुरु जी ने श्री आनन्दपुर साहिब में पाँच किलों का निर्माण किया। ये पाँच किले थे - आनन्दगढ़, लोहगढ़, फतहिगढ़, केशगढ़, होलगढ़। शस्त्रधारी सन्त सिपाही खालसा पन्थ का सृजन तथा गुरु महाराज जी के अन्य सारे कार्य यह सिद्ध करते हैं कि सदियों से विदेशी हुकूमत की गुलामी को सहन करते हुए भारतीयों के अन्दर श्री गुरु महाराज जी स्वाभिमान व शूरवीरता का भाव भरना चाहते थे, स्वतन्त्रता की इच्छा उत्पन्न करना चाहते थे। मुगल राज्य में जनता को गुलाम व हीन भाव में रखने के लिए बहुत ही सख्त कानून बनाए गए थे, जैसे कि शस्त्र धारण करने व रखने की मनाही, दस्तार व कलंगी लगाने की मनाही, घुड़सवारी करने पर प्रतिबन्ध, झंडा, नगाड़ा व फौज रखने पर प्रतिबन्ध आदि।

इन सबका तात्पर्य यह है कि शाही सारे कार्य हुकूमत करने वालों के लिए सुरक्षित हैं। गुरु महाराज जी की सारी क्रिया इन्हीं स्वाभिमान रहित कानूनों के विरुद्ध बहुत बड़ा विद्रोह था। इसीलिए आपने समस्त खालसे को शस्त्रधारी होने, दस्तार व दुमाले सजाने, घोड़े व हाथी रखने, किलों के निर्माण करने, निशान साहिब झुलाने, नगाड़े बजाने इत्यादि की तरफ अग्रसर किया। गुरु जी ने खालसे को बुलन्दावस्था वाले उद्घोष भी दिये जैसे - वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतहि, 'एक' को 'सवा लाख' कहना (सवा लाख से एक लड़ाऊँ) मृत्यु को 'चढ़ाई करना' कहना 'तेग' को 'तेगां' 'पगड़ी' को 'दस्तार', 'दाढ़ी' को 'दाढ़ा' इसी तरह से होली को 'होला महल्ला' आदि सब से खालसे की बुलन्दावस्था व विलक्षणता का चिन्ह है। कवि निहाल सिंह के शब्दों में -

बरछा ढाल कटारा तेगा कड़छा देगा गोला है,
छला प्रसाद सजा दसतारा अरु करदोना टोला है,
सुभट सुचाला अरु लख बाहाँ कलगा सिंघ सुचोला है,
अपर मुछहिरा दाढ़ा जैसे, तैसे बोला होला है।
कवि निहाल सिंघ, महान कोश, पंना *283*

बुलन्दावस्था की इस परम्परा को निरन्तर जारी रखने के लिए आज भी खालसा श्री आनन्दपुर साहिब 'होला महल्ला' मनाने के लिए अपार संख्या में इकट्ठा होता है, बड़े दीवान सजते हैं, अनेकों गतका पार्टियाँ दुमाले सजाए हुए व शस्त्रों-वस्त्रों से सुसज्जित निहंग सिंहों के जत्थे, घोड़ों व हाथियों पर सवार खालसा फौज जब होले के महान नगर कीर्तन में शामिल होती है ताकि खालसे की शानो शौकत

व शूरवीरता के कर्तव्यों को देखकर 'खालसा मेरो रूप है खास' का वरदान प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होता है। शस्त्रों-वस्त्रों से सुसज्जित यह 'होला महल्ला' तख्त श्री केशगढ़ साहिब से प्रारम्भ होता है, किला आनन्दगढ़ साहिब से होता हुआ, किला होलगढ़ साहिब में सम्पन्न होता है। इस दौरान अस्त्रों व शस्त्रों के तरह तरह के कर्तव्य दिखाए जाते हैं। सिंहों की घुड़दौड़, गतकाबाजी, नेजाबाजी, तीरन्दाजी आदि के दृश्य प्रस्तुत करते हैं। निहंग, खालसा फौज को दो भागों में बाँट कर कृत्रिम युद्ध की रचना की जाती है और विजयी दल को सिरोपाओ (सम्मान चिन्ह) देकर सम्मानित किया जाता है। इस महल्ले पर गुलाल व कस्तूरी आदि की फुहार भी की जाती है। आई हुई संगत के वस्त्र भी लाल रंगों से सराबोर दिखाई पड़ते हैं। श्री आनन्दपुर साहिब का होला-महल्ला तथा श्री हुजूर साहिब का होला मोहल्ला यादगारी नजारे प्रस्तुत करता है। आवश्यकता है कि इस परम्परा को खालसा पन्थ, प्रत्येक कस्बे, प्रत्येक शहर, प्रत्येक राज्य, सम्पूर्ण भारत व विदेशों में जहाँ-जहाँ भी गुरुद्वारा साहिब स्थापित हैं, 'होला महल्ला' को पूरी शानो शौकत से मनाया जाए तथा नवयुवकों को गतके व शस्त्रों का प्रशिक्षण दिया जाए। प्रत्येक गुरुद्वारा साहिब, स्कूल, कालेज, विश्वविद्यालयों में भी इसका प्रसिक्षण देने के प्रबन्ध किए जाएं और होला महल्ला के दिन विशेष रूप से इनके दल बनाकर मुकाबिले करवाए जाएँ तथा पुरुस्कार वितरित किए जाएँ। सिक्खी का सन्त सिपाही वाले स्वरूप को कायम रखना अत्यावश्यक है। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी तथा दिल्ली गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी के प्रत्येक सदस्य को अपने-अपने क्षेत्रों की संस्थाओं में सुन्दर व व्यवस्थित ढंग से होले मोहल्ले को सिक्खी शानो शौकत मनाने का हर सम्भव प्रयत्न करना चाहिए।

(पृष्ठ 5 का शेष)

में लीन हो जाना, 'मन तूँ जोति सरूप है आपणा मूल पछाणु।।' आत्म-साक्षात्कार होना, हम सबके लिए बुलन्दावस्था की प्राप्ति है और यह मंजिल-ए-मकसूद का शिखर है लेकिन इसकी प्राप्ति हेतु आवश्यकता है इच्छा शक्ति व प्रार्थना की। आओ! हम सब भी मिलजुल कर प्रार्थना करें कि -

जिन के चोले रतड़े पिआरे कंतु तिना कै पासि ॥
धूड़ि तिना की जे मिलै जी
कहु नानक की अरदासि ॥ ***अंग - 722***

बुलन्दावस्था की प्राप्ति हेतु नाम वाणी के सिद्धान्त यानि कि 'आपि जपहु अवरा नामु जपावहु' के सिद्धान्त पर चलते हुए रतवाड़ा साहिब के संस्थापक प्यारे महापुरुषों तथा सम्माननीया माता जी ने अपना सारा जीवन व्यतीत किया। प्यारे महापुरुषों ने देश व विदेशों में जाकर कीर्तन व दीवानों के माध्यम से तथा अन्य अनेकों साधनों जैसे ऑडियो-वीडियो कैसेटस, धार्मिक पुस्तकों व 'आत्म मार्ग' मैगजीन के माध्यम से नाम वाणी के द्वारा संगत को सराबोर किया तथा उन्हें शाश्वत आनन्द वाले जीवन की समझ प्रदान की। उसी परिपाटी पर चलते हुए ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब के मुखी तथा उनके सहयोगी सदस्य संगत को नाम-वाणी के साथ जोड़ रहे हैं।

देश व विदेशों में गुरमति प्रचार की श्रृंखला निरन्तर जारी है। मार्च माह में महापुरुष (सन्त बाबा लखबीर सिंह जी) आस्ट्रेलिया जा रहे हैं, वहाँ पर कुछ समय तक कीर्तन समागमों के माध्यम से संगत को नाम-वाणी के साथ जोड़ा जाएगा। रतवाड़ा साहिब स्थान पर स्कूलों-कालेजों में नए वर्ष के आगमन पर बच्चों के दाखिले, आत्म मार्ग मैगजीन निःशुल्क अस्पताल, निःशुल्क वृद्धाश्रम, निःशुल्क सिलाई व कढ़ाई प्रशिक्षण केन्द्र, निःशुल्क होस्टल सुविधा, गुरू के लंगर, आवास के सुव्यवस्थित प्रबन्ध, साप्ताहिक दीवान भावार्थ अनेकों कार्य, गुरू जी की कृपा की बदौलत बुलन्दावस्था में चल रहे हैं। यह सब कुछ सतगुरू जी की कृपा व संगत के सहयोग के द्वारा ही सम्भव है। आत्म मार्ग मैगजीन भी अपने सफर के 23 वर्ष पूरे करके अप्रैल 2018 से चौबीसवें वर्ष में प्रवेश कर रहा है।

आप जी समस्त पाठकजनों तथा समस्त संगत का आत्म रंग में रंग जाना ही ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब का मुख्य उद्देश्य है। सतगुरू जी इस उद्देश्य के लिए बल व बुद्धि प्रदान करें।

आत्म मार्ग की सारी सामग्री आत्म रंग में रंगे जाने के लिए ही प्रेरणाश्रोत है। प्रत्येक माह में रूहानियत का नया गुलदस्ता आप समस्त पाठकजनों के रूबरू होता है। आप सबको यह बात तो शायद ज्ञात ही होगी कि सन् 2019 में धन्य श्री गुरू नानक देव महाराज जी का 550 वर्षीय प्रकाश पर्व आ रहा है। समस्त गुरू नानक नाम लेवा श्रद्धालुजनों के द्वारा इस महान पर्व को बेशुमार प्यार व श्रद्धा सहित मनाया जाना है। इस 550 वर्षीय प्रकाश पर्व को समर्पित 'नूरानी मिलाप' शीर्षक को 'आत्म मार्ग' के चौबीसवें वर्ष (अप्रैल 2018 से आत्म मार्ग का चौबीसवां वर्ष शुरू होने जा रहा है) में पदार्पण के शुभ अवसर पर आरम्भ किया जा रहा है। उम्मीद है कि पाठकजन जहाँ प्यारे महापुरुषों व अन्य सबुद्धिजीवियों, गुरुमुख प्यारों एवं ईश्वरीय रंग मं रंगे हुई महान आत्माओं द्वारा की गई गुरमति विचारों को पढ़कर शरशार होते हैं, वहीं पर आप जी के प्यार व वैराग्य में और अधिक वृद्धि करने के दृष्टिकोण से इस 'नूरानी मिलाप' शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित की गई सामग्री अत्यन्त सार्थक सिद्ध होगी। 'आत्म मार्ग' संस्था तथा ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब आप जी की सेवा में इस प्रकार के प्रयास करने के लिए सदैव यत्नशील है।

गुरबाणी अर्थ भण्डार

सन्त हरी सिंह जी रन्धावे वाले

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, पृष्ठ - 54)

सिरीरागु महला 1

सतगुरू नानक देव जी सिरी रागु के घर दूसरे सुरताल के अन्दर यह वैराग्यमयी शब्द उच्चारण कर रहे हैं -

धनु जोबनु अरू फुलड़ा;
नाठीअड़े दिन चारि॥

हे भाई! यह जो धनु = माया तथा जोबन = युवावस्था या जवानी है जिस पर गर्व करके तुम फुलड़ा = फूला फिर रहे हो।

पबणि केरे पत जिउ;
ढलि ढुलि जुंमणहार॥

जिउ = जैसे पबणि = चौपत्ती, केरे = के, पत = पत्ते होते हैं, उसी प्रकार से ये शरीर के अंग आदि हैं। चौपत्ती के पत्ते भी साथ ही ढलक जाते हैं। जब सरोवर का पानी ढुलक जाए अर्थात पानी सूखने के साथ ही चौपत्ती के पत्ते ही सूख जाते हैं। इसीलिए पदार्थों रूपी पानी ढलक गया भावार्थ समाप्त हो गया, उसी तरह से देही भी ढल कर अन्त में नष्ट हो जाती है।

रंगु माणि लै पिआरिआ;
जा जोबनु नउ हुला॥

हे प्रेमीपुरुष! परमेश्वर के रंगु = प्रेम अथवा आनन्द को प्राप्त कर लो भावार्थ प्रेम को धारण कर लो, जब तक कि तुम्हारे पास यह जवानी है अर्थात तुम तो यूँ ही अपनी जवानी के समय को विषय-विकारों की गन्दगी में गंवा रहे हो जबकि यह तो भजन-बन्दगी करने का सुनहरा समय है। दरअस्ल बात यह है कि वृद्धावस्था में तो तुम संसार से पार होने के लिए कोई भी साधन नहीं कर पाओगे।

दिन थोड़ड़े थके;
भइआ पुराणा चोला॥1॥रहाउ॥

इस जीवन के दिन थोड़े ही रह गए हैं और तुम्हारा शरीर रूपी चोला भी अब पुराना हो गया है, भावार्थ शरीर की वृद्धावस्था आ चुकी है।

सजण मेरे रंगुले; जाइ सुते जीराणि॥

जो मेरे सज्जन रंगुले = आनन्द प्रदान करने वाले थे, वे जो जीराणि = श्मशान भूमि में जाकर सो गए हैं, भावार्थ हमेशा के लिए सो गए हैं।

हंभी वंञा डुमणी;
रोवा झीणी बाणि॥2॥

हं = मैं भी डुमणी = दुखी होकर या दुविधा में पड़कर इस दुनिया से चली जाऊँगी और झीणी बाणि = बारीक आवाज से रोवा = रो रोकर चली जाऊँगी (जैसे कि मृत व्यक्ति का अफसोस करते समय औरतें रोया करती हैं)।

की न सुणेही गोरीए;
आपण कंनी सोइ॥

गोरीए = ऐ कब्र में सो जाने वाली स्त्री! तुम क्यों नहीं सुन रही हो? अथवा ऐ जीव रूपी स्त्री! तुम वास्तविक बात को क्यों नहीं सुन रही हो? तुम अपने कानों के द्वारा यह सोइ = खबर कि अमुक व्यक्ति मर गया है या मरने वाला है आदि अथवा तुम वेद शास्त्रों की सोइ = खबर को भावार्थ ज्ञान को क्यों नहीं सुनती हो जो कि पुकार-पुकार कर तुम्हें मृत्यु का सन्देश दे रहे हैं -

लगी आवहि साहुरै;
नित न पेईआ होइ॥

हे सखी! तुम अपनी ससुराल की तरफ यानि कि परलोक की तरफ चली आ रही हो क्योंकि पेइआ = पैतृक घर में तो हमेशा रहना नहीं है, भावार्थ तुम्हें इस संसार रूपी पैतृक घर को छोड़कर एक दिन परलोक रूपी अपनी ससुराल में जाना ही पड़ेगा यानि कि तुम्हें इस संसार से प्रस्थान करना ही पड़ेगा।

नानक सुती पेईऐ;
जाणु विरती संनि॥

सतगुरू नानक देव जी फुरमान करते हैं कि जो जीव रूपी स्त्री संसार रूपी पैतृक घर में अविद्या रूपी नींद में सोई हुई पड़ी रहती है उसकी वृत्ति को सेंध लगी हुई है। चोर लोग

तो रात को दीवार या घर में सेंघ लगाते हैं जबकि यह स्त्री दिन में ही सोई रहती है और उस सुप्तावस्था में ही इसके घर में विषय विकारों ने सेंध लगा दी है। विडम्बना यह है कि इसे इस बात की तनिक भी चिन्ता नहीं है। कहने का तात्पर्य यह है कि यह जीव वेद शास्त्रों के ज्ञान को सुनते हुए भी अचेत है। शिक्षित होने के बावजूद भी, चौरासी लाख योनियों का सरदार होने के बावजूद भी यह मनुष्य पशुओं की भांति बुरे कार्यों में लिप्त रहता है। यह वृत्ति को सेंध ही लगी हुई है जिसके द्वारा विषय विकार इसे लूटते जा रहे हैं।

गुणा गवाई गंठड़ी;
अवगण चली बंनि॥4॥24॥

इस जीव रूपी स्त्री भक्ति अथवा दैवी संपदा रूपी गुणों की गठड़ी को, जिसे कि बुद्धि रूपी पल्ले में बाँधना था, गंवा लिया है तथा अवगुणों को हृदय रूपी पल्ले में बाँधकर परलोक रूपी ससुराल में चली है। यह किस प्रकार से पार हो सकेगी? भावार्थ वह इस भवसागर को पार नहीं कर पाएगी।

सिरीरागु महला 1 घरू दूजा 2

आपे रसीआ आपि रसु;
आपे रावणहारू॥

ऐ बन्धु! वह प्रभु स्वयं ही रसीआ = रस का ज्ञाता है, वह स्वयं ही, रस रूप है तथा स्वयं ही रावणहारु = रसों को भोगने वाला है।

आपे होवे चोलड़ा;
आपे सेजु भतारू॥1॥

स्वंय ही वह सुन्दर चोलड़ा = चोला रूप है, स्वयं ही सेज रूप है और स्वयं ही भतारु = पति रूप है।

रंगि रता मेरा साहिबु;
रवि रहिआ भरपूरि॥1॥रहाउ॥

स्वंय ही वह स्वामी प्रभु समस्त रंगों में रंगा हुआ है। वह कण-कण में व्याप्त परमात्मा सर्वत्र रमा हुआ है।

आपे माछी मछुली; आपे पाणी जालु॥

वह स्वयं ही माछी = मछलियों को पकड़ने वाला मछुआरा है और वह स्वयं ही मछुली = मछली रूप है। स्वयं ही वह जल रूप है तथा स्वयं ही जाल (मछलियाँ पकड़ने वाला जाल) रूप है।

आपे जाल मणकड़ा;
आपे अंदरि लालु॥2॥

वह स्वयं ही जाल में मणकड़ा = मनका रूप है (जाल में मणकड़ा = काना या बाँस की जो पोरी डाली हुई है होती है) जब वह डूब जाती है तो शिकारी समझ जाता है कि मछली फँस गई है और वह मछली को पकड़ने के लिए जाल को बाहर खींच लेता है) तथा वह स्वयं ही लालु = माँस का टुकड़ा है जैसे केंचुए आदि होते हैं, जिन्हें कि कुण्डी के साथ चिपकाया होता है। लालचवश मछली उस माँस के टुकड़े को खाने के लिए आती है और पकड़ी जाती है। वह लालु = माँस का टुकड़ा भी वह स्वयं ही है।

आपे बहु बिधि रंगुला;
सखीए मेरा लालु॥

वह स्वयं ही बहुत प्रकार से रंगुला = आनन्दित रहने वाला व खुशमिजाज है। सखीऐ - हे सन्त रूप सहेलियो! जो मेरा लालु = प्यारा परमेश्वर है वह स्वयं ही एक से अनेक रूप धारण करने वाला है अथवा वह स्वयं ही राजसी, तामसी व सातकी स्वभाव धारण करने वाला है।

नित रवै सोहागणी;
देखु हमारा हालु॥3॥

जो ज्ञानवान सन्त स्वरूप सोहागिनें हैं, वे नित्य ही उसके आनन्द को रवै = भोगती हैं। हे अन्तर्यामी! कभी हम गरीबों पर भी अपनी प्यार भरी दृष्टि डाल दो ताकि हम भी आपके आनन्द को प्राप्त करने में सक्षम हो जाएँ।

प्रणवै नानकु बेनती;
तू सरवर तू हंसु॥

श्री गुरू नानक देव जी प्रणवै! नम्रता सहित फुरमान करते हैं कि हे वाहिगुरू जी! सरवरु = मान सरोवर भी तुम स्वयं ही हो तथा हंस भी स्वंय ही हो।

कउलु तूहै कवीआ तूहै;
आपे वेखि विगसु॥4॥25॥

कउलु = कमल रूप भी तुम स्वयं ही हो और कवीआ = कम्मी रूप भी तुम स्वयं ही हो अथवा कउल = कमल जो सूर्य को देखकर दिन में खिलने वाले हैं तथा कवीआ = जो चन्द्रमा को देखकर रात्रि में खिलने वाली है वह भी तुम स्वयं ही हो तथा स्वयं ही परमात्मा कम्मी रूप होकर चन्द्रमा को देखकर खिल रहा है तथा स्वयं ही कमल रूप होकर सूर्य को देखकर पुलकित हो रहा है।

'चलता'

गुरू गोबिंद सिंह रचित - जफरनामा

सन्त निरंजन सिंह नूर

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, पृष्ठ - 56)

मूल

79. मूल

चिह मरदीकि अखगर खमोशाँ कुनी।
कि आतिश दमाँ रा बदोशाँ कुनी।

शब्दार्थ - चिह मरदी = क्या बहादुरी है?, अकगर = चिंगारी, खमोशकुनी = बुझाई, अतिश दमा = प्रज्ज्वलित अग्नि, बदोशां = कन्धों तक।

अनुवाद

चिंगाड़ी बुझाउणी की मरदानगी?
तूं प्रचंड अगनी जगाई कोई!

तुमने एक चिंगारी को बुझा कर क्या बहादुरी की है, उल्टा तुमने तो प्रज्जवलित अग्नि को कन्धों तक यानि कि खूब ऊँचा कर दिया है।

80. मूल

चिह खुश गुफत फिरदौसीए खुश बयाँ।
शिताबी शवद कारि आहरमनाँ।

चिह खुश गुफत = कितना सुन्दर कहा, खुश बयां = सुन्दर कविता लिखना वाला, फिरदौसी = ईरानी कवि, खताबी = जल्दी, आहरमना = शैतान।

अनुवाद

कला आखे फिरदौसी दी शान दी;
कि काहली है करतूत शैतान दी।

महान कवि फिरदौसी ने कितना सुन्दर कहा है कि किसी भी काम में अत्यन्त जल्दी करना शैतान का काम है।

81. मूल

किह मा बारगाहि हजरत आयम शुमा।
अजाँ रोज बाशी उ शाहिद हमाँ।

शबदार्थ - मा = हम, बारगाहि = तेरे दरबार में, अजां = बांग, शाहिद = गवाह।

अनुवाद

जदों आवाँ मैं तेरे दरबार 'च,
ताँ चंगै उह काजी गुआह होए जे।

जब मैं तुम्हारे दरबार में आऊं तो तुम्हारा गवाह, वह काजी भी उपस्थित होना चाहिए।

82. मूल

वगरनह तू ईं रा फरामुश कनद।
तुरा हम फरामोश यजदाँ कुनद।

शब्दार्थ - वगरनह = यदि, ईंरा = इसे फरामुस = भूलना, तुरा हम = तुझे भी यजदा = भगवान।

अनुवाद

जे इस नेक कंम नूं तूं भुल जाएंगा,
खुदा तैनूं भुलू, तूं रूल जाएंगा।

यदि तुम इस बात को (तुम्हारे वायदे के अनुसार अपनी मुलाकात) भूल जाओगे तो फिर परमात्मा भी तुम्हें भूल जाएगा।

83. मूल

अगर कारि ईं बर तू बसती कमर।
उदावंद बाशद तुरा बहिरावर।

शब्दार्थ - कारि ईं बर = इस काम पर, बसती = तुमने कमर कस ली है, बाशद = होगा, बहिरावर = फल देने वाला।

अनुवाद

जे लक बंन के कार इह नूं करें,
ताँ रब पाक सचे नूं खुश तूं करें।

यदि तुमने यह कार्य करने के लिए कमर ही कस ली है तो फिर परमात्मा तुम्हें इसका फल भी देगा।

84. मूल

कि ईं कारि नेकसतो दीं परवरी।
चू यजदाँ शनासी बजाँ बरतरी।

शब्दार्थ - ईं कारि = यह कार्य, नेकसत = अच्छा है, दी परवरीं = धर्म पर चलना, यजदां शनासी = परमात्मा की पहचान, बरतरी = अच्छा।

अनुवाद

हाँ नेकी तों वृडा कोई धरम ना।
है नेकी ज़ुदा, एस विच भरम ना।

यह कार्य तथा धर्म का पालन करना अच्छा है। यदि परमात्मा की पहचान हो भी जा तो और भी अच्छा है।

85. मूल

तुरा मनन दानम कि यजदाँ शनास।
बरामद जि तू कारहा दिल-खराश।

शब्दार्थ - न दानम = मैं नहीं जानता, तुरा = तुम्हें, जि तू = तेरे पास से, कारहा = कार्य (बहुवचन), बरामद = होना, दिल खराश = दिल दुखाने वाले।

अनुवाद

किवें मंना र्ब नूं तूं पहिचाणदैं?
किवें दिल त्राशे तूं की जाणदैं!

मैं तुम्हें परमात्मा की पहचान करने वाला नहीं मानता हूँ क्योंकि तुम्हारे द्वारा अनेकों कार्य दिल दुखाने वाले हुए हैं।

86. मूल

शनासद हर्मी तो ना यजदाँ करीम।
ना ख्वाहद हमे तू बदौलत अजीम।

शब्दार्थ -खहाद = चाहेगा, बदौलत अजीम = विशाल दौलत।

अनुवाद

तेरी बादशाहत, इह दौलत जमीं,
खुदा वासते तूं सिफर वी नहीं।

इसी कारण से दयावान परमात्मा भी तुम्हें निवाजेगा नहीं। वह तुम्हारी विशाल दौलत के होते हुए भी तुम्हें चाहेगा नहीं।

87. मूल

अगर सद कुरआँ रा बखुरदी कसम।
मरा इअतबारे न ईं जर्ह दम।

शब्दार्थ - सद = सौ, बखुरदी कसम = कसम खाई, जरह = जरा सी भी।

अनुवाद

कुरानी कसम खा तूं सौ वार वी,
रही गृल ना तेरे इतबार दी।

तुम अब भले ही कुरान की सौ कसमें भी खा लो लेकिन मुझे अब उन पर तनिक सा भी भरोसा नहीं है।

87. मूल

हजूरत न आयम न ईं रह शवम।
अगर शाह बखाहद मन आँ जा रवम।

शब्दार्थ - हजूरत = तेरे पास, ना आयम = नहीं आऊँगा, शाह = शहजादा, मुअज्जम, बखाहद = यदि चाहे।

अनुवाद

तेरे कोल आवण ते राह ना पवाँ।
*जे *शाह आखदै ताँ उजर ना कराँ।*

यहाँ पर शाह का तात्पर्य मुअज्जम से है जो कि बहादुर शाह का बेटा था और उस समय बहादर शाह के नाम के नीचे पंजाब व काबुल का सूबेदार नियुक्त किया गया था।

ऐ औरंगजेब! अब मैं तुम्हारी हुजूरी में हाजिर होने के रास्ते पर नहीं पड़ूँगा लेकिन यदि शहजादा मुअज्जम मुझे बुलाएगा तो मैं वहाँ पर चला जाऊँगा।

89. मूल

खुशश शाहि-शाहान औरंग-जुब।
कि चालाक दस्तसतो चाबक रकेब।

शब्दार्थ - खुशश = भाग्यशाली दसत = हाथ, चालाक = चुस्त, चाबक रकेब = अच्छा घुड़सवार।

अनुवाद

औरंगजेब तूं हैं बड़ा होशिआर।
तूं शाहा दा साह मंनिआ शाह-सवार।

ऐ औरंगजेब! तुम बहुत ही भाग्यशाली शहंशाह हो साथ ही तुम हाथों के बहुत चालाक व एक अच्छे घुड़सवार हो।

90. मूल

कि हुसनुल जमाल्सतो रौशन जमीर।
खुदावंदि मुलक असतो साहिबि अमीर।

शब्दार्थ - हुसनुल जमाल = सुसुन्दर, रौशन, जमीर = उज्जवल बुद्धि का स्वामी, खुदावंद = मालिक, साहिबि अमीर = धन-दौलत वाला या हाकिम।

अनुवाद

मुद्बर बड़ा, सान-शौकत बड़ी,
अते हामकाँ दा तूं सरदार वी।

तुम सुन्दर भी हो और बुद्धिमान भी हो, तुम मुल्क के स्वामी भी है और धन-दौलत वाले हाकिम भी हो।

'चलता'

नौवें रत्न - सन्त ईशर सिंह जी महाराज, राड़ा साहिब

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, पृष्ठ - 60)

परीक्षा का पेपर आ गया

सरदार चरणजीत सिंघ कोका कोला वालों ने सन्त जी महाराज से कहा था, ''इगलैण्ड में प्रत्येक आदमी माया के अन्दर ही लपेट लिया जाता है और फिर वह उससे मुक्त नहीं हो सकता। विलायत के गुरूद्वारा प्रबन्धक और आम सिख संगत यही समझती है कि यहाँ पर प्रत्येक प्रचारक, धर्म कीर्तन तथा प्रचार के बहाने, माया प्राप्ति को अपना लक्ष्य बनाकर पहुँचता है। कोई भी मनुष्य उससे बरी नहीं हो सकता।'' परन्तु महापुरुषों ने यह नियम जीवन पर्यन्त निभाया कि आप किसी गुरू स्थान से कोई माया नहीं लिया करते थे। अब इगलैण्ड की सबसे अधिक मालदार सभा की वार्ता सुनो।

साऊथहाल दीवानों की समाप्ति पर गुरूद्वारा कमेटी ने हिसाब लगाया कि सन्त महाराज के दीवानों के समय उन्हें कम से कम 30 हजार पौण्ड की आमदनी हुई है और खर्च कुछ भी नहीं हुआ क्योंकि सन्त महाराज के रिहायश वाले स्थान पर और प्रेमी खर्च किया करते थे। सो कमेटी के अधिकतर सदस्य इस मत के थे कि सन्त महाराज को अधिक से अधिक बढ़-चढ़ कर माया भेंट करनी चाहिए। सरदार तारा सिंघ प्रधान, कैप्टन रतन सिंघ जी जनरल सैक्रेटरी, अमर सिंघ जी थिन्ड, गिआनी गुरदीप सिंघ हैड ग्रन्थी, दरबार साहिब, गिआनी अमोलक सिंघ, सुरजीत सिंघ जोहल आदि मिलकर सन्त महाराज जी के पास पहुँचे। एक दोशाला अन्य सामग्री तथा बहुत से पौण्ड लेकर सन्त महाराज जी के पास आए। सन्त महाराज जी ने प्रेम, आदर पूर्वक मान करते हुए आने का कारण पूछा क्योंकि उस दिन दीवान की समाप्ति हो चुकी थी। सन्त महाराज जी आने का कारण सुनकर मुस्कराये और फ़रमान किया -

''भाई, आप पता नहीं किसी भ्रम में पड़े हो कि मनुष्य हर स्थान से पैसे कमाकर अपने घर को ले जाता है पर अपने घर से लेकर बाहर नहीं जाता। बल्कि उसकी इच्छा रहती है कि बाहर की रास घर में ही आ जाये, फिर यह आप हमारे घर की रास को हमें ही कैसे दे सकते हो? इस तरह घर ही बंट जायेगा।''

आप कहते हैं कि राड़ा साहिब लंगर चलता है फिर वह किसका है जो यहाँ चलता है? रोटी पकाने वाले और खाने वाले हर समय एक नहीं हो सकते पर गुरू का साझांपन तो हर स्थान पर एक जैसा ही है। उसे कहकर अलग नहीं किया जा सकता। आप इसके द्वारा और अधिक धन खर्च करके इसे और बढ़िया ढंग से चलाओ, इसी में ही हमारी खुशी है। जिस दिन इस स्थान को बड़ा करें, हमें बताना हम भी हर प्रकार की मदद करेंगे। पर गुरू के खजाने में से माया लेकर, दूसरी जगह गुरू के खजाने में जाए, यह हमारा सिद्धान्त नहीं।''

सन्त महाराज जी की ओर से उत्तर जानने के पश्चात उन्होंने कहा कि वे इस सारी माया को ड्राफट बनवाकर सीधे ही करमसर भेज देंगे। तब हुक्म हुआ कि वह ड्राफ्ट तथा एक और अन्य ड्राफ्ट के साथ वापिस भेज देंगे। इसलिये गुरू की माया को ड्राफ्टों पर खर्च करने से रोकना और बचाना। यह माया यहीं पर ही रहेगी। फिर सिंघ सभा की ओर से दस हज़ार पौण्ड, सन्त सेवा सिंघ जी को श्री दमदमा साहिब सेवा हित दे दिया था।

दसवें महीने की 31 तारीख को सन्त महाराज जी संगतों को यह वायदा करके आए, हम जल्दी ही विलायत आयेंगे पर शायद आने-जाने की बात ही खत्म हो जाये।

कम समय के अन्दर अधिक कार्य

इस बार वापिस आने पर जो सबसे अधिक ध्यान देने वाली बात थी, वह यह थी कि सन्त जी महाराज हर एक सज्जन को अधिक से अधिक समय देते तथा प्यार और सेवा के रूप में पेश आया करते थे।

हापुड़ के सरदार, बड़े कारखानों के मालिक गुरसिख परिवारों की इच्छा थी कि सन्त महाराज, एकान्त स्थान पर उनके घर के पास ही तपोस्थान में, कुछ समय के लिये विश्राम करें तथा हमें सेवा सुरक्षा तथा पावन वचनों के लिये समय प्रदान करें। आप जी ने जत्थे के सिघों को तो दबलान भेज दिया पर आप दो दिन कोका कोला वाले सरदार के

घर रहकर सीधे ही हापुड़ सरदार इन्डस्ट्रीज़ पहुँच गये और अकेले ही निजी सेवक सहित यहाँ पर कई दिनों तक ठहरने के बाद दबलान दसवीं के दीवान पर पहुँच गये। हापुड़ से चलकर सन्त बाबा मींहा सिंघ जी की प्रार्थना स्वीकार करके ही सन्त जी महाराज ने लताले की संगत को चार दिन कृतार्थ किया, फिर लुधियाना, जवद्दी आदि नगरों पर कृपा करते हुए, अमृतमयी वचनों की बख्शीश दी।

नगर खटड़ा से सरदार सम्पूर्ण सिंघ जी कलकत्ता, महाराज के परम हितैषियों में से हैं जो पहले सन्त बिशन सिंघ जी महाराज कांजला के सेवक थे फिर उनकी आज्ञा तथा भावना अनुसार ही सन्त जी महाराज के निकटवर्ती सेवकों में शामिल हो गये। सरदार सम्पूर्ण सिंघ जी के सुपुत्र सरदार चरणजीत सिंघ खटड़ा को पिता जैसी ही लगन है। उनकी धर्म पत्नी भी इस बात में उनसे पीछे नहीं रहती है। सो उस इलाके की संगत सहित बरनाला से चलकर दीवान सजाने के लिये प्रार्थना की सो 24 फरवरी 1974 से तीन मार्च तक, दीवान बरनाला में सजाने का फैसला किया। सन्त जी महाराज ने जिन नगरों के रास्ते से जाना था उस तरफ स्वागत करने वाले लोगों की बाढ़ सी ही आ गई थी। गमोहर, वजीदे, मताल कला, भदलविंड, संघेड़े रास्ते में कुर्सियाँ, बड़े-बड़े पण्डाल तथा अन्य अनेक गेट आदि बना रखे थे। हैरानी होती थी कि लोग वजीरों का मान तो अपनी जरूरतें, स्वार्थ तथा कमज़ोरियों के कारण ही करते हैं पर सतपुरुषों का यह स्वागत निरिच्छत तथा केवल आत्म ज्ञान के भण्डार के लिये प्यार सिद्ध करता था। सन्त जी महाराज की 50 वर्षों की कठिन तपस्या, साधना तथा लोक भलाई के लिये किये गये महान उपकारों का संगत पर गहरा प्रभाव पड़ा।

उस समय डीज़ल की कमी को लोगों ने महसूस न किया क्योंकि बसों तथा ट्रैक्टरों वाले प्रेमियों ने लोगों के लाने, ले जाने तथा आवाजायी में पूरी-पूरी सहायता तथा सेवा निभाई थी। रास्ते में तथा पण्डाल में जाने से पहले या फिर कुर्सी के समय सन्त महाराज हर सज्जन के साथ ऐसे बातें करते दिखाई देते थे, मानों अब जल्दी ही फिर शायद समय ही न मिल सके। एक सज्जन से कहने लगे, ''भाई, बीबा जो काम करना है, जो भी विचार बनाना है, वह अभी बना लो। फिर क्या पता तुम्हारी बारी बात करने की आ ही न सके।'' अन्तिम दिन में अमृत प्रचार में 400 सिंघ गुरू वाले बने थे। यह काफी बड़ा रिकार्ड था।

वैशाखी का अन्तिम दीवान

सन्त महाराज जी ने ये अन्तिम दिन की कार्यवाही बड़े ही अजीब ढंग से पूरी की। हमेशा की तरह अलग से बरनाला की संगत को फिर दीवान सजाने का समय दे दिया था। रायकोट दधाहूर आदि अन्य स्थानों पर कुर्सियाँ लगती रहीं। आप हर जगह पूरा समय देकर ही आगे चल पड़ते थे। अन्त में बरनाला की संगतों से भी आज्ञा उसी तरह से मांगी जैसे कोई सदा के लिये ही विदा हो रहा हो। चैत्र की संक्रान्ति करमसर में करने के उपरान्त भवानीगढ़, शंकरपुर चार-चार दीवान सजाकर फाल्गुन की दसवीं, हर महीने की तरह दबलान में आकर सन्त समागम किया। फाल्गुण की पूर्णमाशी से पहले करमसर और अगले दिन पूर्णमाशी का दीवान अतरसर कनेच में सजाये। लुधियाना तथा पटियाला के भाग्य में भी आखिरी चार-चार दीवान आ गये। दिन कम हो रहे थे। संगतों की दर्शनों की लालसा हर समय बढ़ती ही जा रही थी। चलते-चलते आखिर वह दिन भी आ गया जब करमसर की धरती को अन्तिम स्पर्श देना था।

वैशाखी का वह दिन

हम पहले कह ही चुके हैं कि यह वैशाखी अन्तिम थी। 1927 के बाद कितनी भाग्यशाली वैशाखियां और यह कर्म भूमि पर तथा बाद में करमसर ने देखी हैं। कितने महाबली, सूरमें जपी, तपी, हठी, ब्रह्मज्ञानी, कर्म बलि प्रधान पुरुष इस धरती को सिर झुकाते या कई यहाँ से वरदान प्राप्त करने के लिये पहुँचे होंगे। उनकी साधना भी बहुत कठिन है। उपस्थित संगतों में वे भी थे जिन्होंने किसी समय हीसा के वृक्षों के नीचे बैठकर तपस्वियों के साथ धरती पर आसन लगाये थे। बाबा कर्म सिंघ का लंगर जिसमें दस-दस हज़ार प्रेमी एक ही समय में भोजन किया करते थे, कभी किसी समय एक रोटी का आटा तथा गूंथने के लिए एक थाली ही हुआ करती थी, तक सीमित था। आज हज़ारों बोरियों से भरे हुए गोदाम तथा कई बोरी आटा गूँधने वाली बड़ी-बड़ी परातें तथा बर्तन प्राप्त हैं।

सारी संगत को लंगर खिलाने के लिये कभी एक समय सन्त किशन सिंघ जी अपनी साईकल पर ही सामान लाया करते थे, जिसकी पूर्ति तो बाबा की कला ही किया करती थी, पर पूरा हो जाता था। आज भी गड्डे पर पूर्ति रसद लाकर भी पूरी होना असम्भव है। सो करमसर की धरती के निर्माता, इस धरती को अन्तिम नज़र कर्म तथा बख्शीश करने हित

सभी चक्कर काटते हुए घूम रहे थे। पिछले कई वर्षों से सन्त महाराज ने कभी भी इस डेरे का पूरा ध्यान तथा पूछ-ताछ महसूस नहीं की थी। सारी ही ज़िम्मेवारी उनके गुरूभाई सन्त बाबा किशन सिंघ जी की थी, आप तो केवल यदि पूछते तो राय दिया करते थे। ज़िम्मेवारी बहुत कम ही लिया करते थे। ठीक भी है, ज़िम्मेवारी की गठड़ी तो सन्त अतर सिंघ जी महाराज ही बाबा किशन सिंघ जी के सिर पर ही रख गये थे, जब यह फरमाया था, ''भाई किशन सिंघ तू सदा ही इसके साथ रहना। यह हमारा साध है। दुनियांदारी की बातें बिल्कुल भी नहीं जानता। तू सारी जिम्मेवारी स्वंय ही सम्भाल लेना। ऐसा समय भी आयेगा जब सारी जिम्मेवारी तेरे कन्धों पर आ जायेगी।''

सो यह वही वैशाखी का दिन था जो पहली बार 1927 में सन्त महाराज ने खालसा जी का प्रकट दिवस, राड़े की ढक्की में छोटे से वनवासियों की तरह मनाया था। एक छोटा सा कमरा, जो कि लंगर स्टोर, आराम-गाह और फिर वही महाराज गुरू ग्रन्थ साहिब जी का प्रकाश स्थान था, पर अब 60 साल के समय के अन्तराल में यह महान शाही इमारतों, शाही हरि मन्दिर जिसकी शोभा ही न्यारी है, रिहायश तथा लंगर की इमारतों का कोई हिसाब नहीं है। करोड़ों रूपये खर्च करके भी अभी पूरा नहीं हुआ। यह स्थान जो सन्त जी महाराज का यह पूरा चक्र नहीं था, क्यों कुछ अज़ीब सा दिखाई देता था, परन्तु यह बात सौ प्रतिशत सच है कि उन्हें किसी से भी कोई बहुत अधिक लगाव दिखाई नहीं देता था, प्रसन्न हो रहे थे, कोई भी माली अपनी किरत, बाग के पौधे तथा फूल देखकर प्रसन्न क्यों न हो? बाबा जी अकेले-अकेले को मिलते, फिर उसके मन की पीड़ाओं को जो विछौड़े के कारण होने वाली थी, अनुभव करते हुए भी वे उन्हें पूछते नहीं थे, क्यों जो उनके हृदय में उठ रही वह पीड़ा ही अब सांझीदार बनकर सन्त जी महाराज की अपनी पीड़ा बनकर रह गई थी। फिर भी हृदय में बढ़ रही वेदना को, अपनी प्यारी झलक से बेशक बन्द नहीं, परन्तु कम तो कर ही रहे थे। हर मन सन्त जी महाराज को पास देखकर, एक बार तो गदगद हो उठता था। दो पल के लिये वह आने वाले विछौड़े को भी भूल जाता और तुरन्त ही चरणों में सिर झुकाकर खड़ा हो जाता था। सन्त जी महाराज का प्रताप ऐसा था कि कोई भी प्राणी, कोई भी बात करने की शर्म महसूस नहीं करता।

कुर्सी लगी। दर्दों, चीखों तथा पीड़ा को रोककर संगतों ने कुर्सी पर बैठे बाबा जी के चरण स्पर्श किये। नमस्कार करते समय तो कम से कम प्रत्येक के नेत्र सजल हो उठते थे, परन्तु जुबान सुन्न थी। हर कोई जानता था कि करमसर की ये घड़ियाँ पुनः लौटेंगी या नहीं। दिन बीत गया, काफी सारी संगत ने आज लंगर में से भोजन भी नहीं किया था। भोजन खाने के लिये मन ही नहीं करता था।

रात के दीवान में हाज़िरी बेशुम्मार थी, यहाँ तक दीवान स्थान से बाहर संगते नहर की दीवार पर, दूर तक बैठकर स्पीकर द्वारा बाबा जी के अमोघ तथा मनोहर वचन सुन रही थी।

सन्त महाराज जी ने बड़े मान के साथ कहा था, ''आज खालसा जी को शीश देकर गुरसिखी ग्रहण करने का दिन है।'' आप सिर पर उसकी सारी विचारधारा तथा शरीर की सारी क्रिया केवल गुरू आधारित हो, यही खालसा जी का तत्व सिद्धान्त है। आज के दिन ही शीश की बलि देकर, भाई दया सिंघ जी ने कलगीधर जी से 'प्यारे' होने का मान प्राप्त किया था। हंगता रहित सेवा, त्याग सहित जीवन को, सिखी की धारना पर लगाना ही असली मनोरथ है, फिर जब सन्त जी महाराज ने आखरी प्रकरण बन्द करने पर तथा फिर संगतों को कल को वहाँ से जाने तथा फिर लम्बी छुट्टी की बात की, तब कोई भी ऐसा नेत्र नहीं था, जो अपने आसुओं के जल को रोक सकता। कुछ एक की हूक दबी हुई पर अधिकतर तो दूर तक मंच पर बैठे, सन्त महाराज तक पहुँचती थी। तब सन्त महाराज जी ने कहा था, ''साध संगत जी 55-60 साल तक इकट्ठे सत्संग किया है। फिर हम कभी भी तुमसे न दूर हो सकते हैं और न ही अलग रह सकते हैं। वाहिगुरू की कृपा के कारण, तुम इस शरीर को फिर पुनः तुम अपने अन्दर जरूर देखोगे। यह हमारा वायदा है।'' गुरू सतोतर पढ़ा गया। दीवान की समाप्ति हुई। सन्त महाराज विश्राम करने के लिये तपोस्थान में पहुँचे, परन्तु प्रीतवान दीवाने सो न सके। उन्होंने सन्त किशन सिंघ जी महाराज को जाकर कहा कि कोई ऐसा हल निकालो, जिससे सन्त जी महाराज बाहर न जायें।

13 अप्रैल को सन्त किशन सिंघ जी महाराज काफी देर के बाद बिराजमान हुए। अमृत बेला में दो बजे स्नान करके समाधि स्थित हुए। तब उनकी सुरत में महाआकाश में से एक महान सितारा टूट कर अलोप हो गया प्रतीत हुआ था। यह देखकर सन्त महाराज अचानक घबरा उठे। पहले भी पिछली रात को संगतों ने कई बार जोर देकर कहा था

कि वह कैसे भी हो सन्त ईश़र सिंघ जी को अब बाहर जाने से रोकें, दिन निकलते ही सन्त जी महाराज उठकर पहले ही सन्त जी के तपोस्थान की चाबी से दरवाज़ा खोलकर अन्दर चले गये।

सन्त ईश़र सिंघ जी महाराज चाय पी रहे थे, फिर गुरूभाई को आता देखकर प्रसन्न हुए और बराबर ही चारपाई पर बिठा लिया तथा सुख पूर्वक आने का कारण पूछा। सन्त किशन सिंघ जी ने संगत का तथा फिर अपना आज का संकल्प था वह भी बताया। सन्त ईश़र सिंघ जी महाराज ने कहा, ''हे महापुरुष! आपने सारी आयु हर तरह सरपरस्त तथा बड़े गुरूभाई की तरह साथ ही नहीं बल्कि हर तकलीफ सहन करके हमें सुखी रखने का प्रयास किया, फिर यह घबराहट क्यों?''

सन्त किशन सिंघ जी ने कहा, ''हमने आपसे कभी कोई मांग नहीं की। साथ ही अवस्था की भी बात है। उम्र ऐसे दौर में है कि अब शरीर की बहुत अधिक आशा नहीं है कि कब तथा किस समय दरगाह से निमन्त्रण आ ही जाना है। आप हमें अब वचन दो कि अब कहीं नहीं जायेंगे। संगत के दर्शन तथा मेल मिलाप यहीं पर ही करते रहो। बाहर के दीवान भी बन्द कर दें। माया की कोई जरूरत नहीं है। अब केवल आपकी ही जरूरत है। इसलिये अब इस जरूरत को पूरा करो और बाहर जाने की सलाह बन्द कर दो।''

सन्त महाराज ने प्यार से सन्त किशन सिंघ जी की ओर देख कर कहा, ''आप ज्ञानवान हैं। कोई अज्ञानी तथा कमज़ोर मनोवृत्ति के मनुष्य नहीं हो? फिर तुम क्यों दुविधा में फंसते हो? वाहिगुरू तुम्हारा भला करेगा। हम तो उसके ही मनुष्य हैं। फिर जो उसे रूचे, उसे रोकना ही उसकी मर्ज़ी में दखल देना है। फिर सन्त के वचनों का सवाल भी है। इस बार हमने वायदा कर लिया है, फिर तुम्हारी ही आज्ञा ले लिया करेंगे। इस बार तुम खुशी-खुशी विदा करो। आप हर समय ही उच्च कलाओं में रहने वाले हो। बड़े से बड़े तथा कठिन समय में भी आपने मन को नहीं डगमगाने दिया फिर अब कौन सी बात है? करमसर की गाड़ी सदा ही तुमने चलाई है। तुम ही वास्तव में इसके निर्माता हो। फिर इसकी जिम्मेवारी, हर तरह से तुम्हारी ही है। हम तो इसके विपरीत जितनी देर यहाँ रहते हैं, तुम्हारे लिये तकलीफें ही बढ़ाते हैं। आप बड़े हो। फिर सन्त महाराज जी ने हमारी जिम्मेवारी तुम्हारे सुपुर्द की थी जो आपने बहुत ही महत्वपूर्ण ढंग से निभाई। चलो हस कर तथा प्रसन्न होकर विदायगी दो। फिर कोई भी रोक नहीं आयेगी।''

''चलो हमने अपना फर्ज़ पूरा किया है। पर तुझे सन्देह है कि यह शरीर शायद अब लौटकर पुनः तुम्हें नहीं देख सकेगा।'' इतना कहते ही सन्त जी महाराज का गला रून्ध गया और वह भरे हुए मन से, तपोस्थान से अपने स्थान को लौट आये। काफी संगत को यह पूरी आशा थी कि सन्त जी महाराज बड़े सन्त जी से यह बात मनवा लेंगे। उन्हें सन्त महाराज जी का चेहरा देखकर ही फिर और बात पूछने का ध्यान ही नहीं रहा। कई प्रेमी तो वैरागवश रोते ही नज़र आया करते थे। यह दिन अमृत प्रचार का दिन था। चार सौ से अधिक प्राणी सतगुरू की पाहुल के अधिकारी बने थे। कुर्सी के समय सन्त महाराज जी के सामने इतनी संगत थी कि तिल धरने की भी जगह नहीं थी। सन्त महाराज जी सभी को धैर्य तथा फिर चढ़ती कला में रहकर, हालातों के साथ संघर्ष करने का हौंसला दे रहे थे।

15 अप्रैल को सन्त जी महाराज जत्थे साहित, दबलान होते हुए रात के समय दिल्ली पहुँच गये। दिल्ली में भी इस बार पहले की अपेक्षा संगत की भीड़ हद से ज्यादा थी। दोनों ओर से खास दिल्ली से आस पास की बस्तियों से इतने लोग पहुँचे थे कि अन्य धर्मों वाले लोग हैरान हुआ करते थे। सो दिल्ली में ही आप मई तक दीवान सजाते रहे, अमृत वचनों के लिये कोका कोला वालों की कोठी पर दोपहर से पहले कुर्सी लगती रही।

दिल्ली की एक रीत तकरीबन 40 साल पुरानी हो गई थी कि सन्त महाराज के दिल्ली दीवानों की समाप्ति पर कोका कोला वाले स्नेही सरदारों की ओर से पाठ का भोग पड़ा तथा 10 तारीख को समाप्ति हुई। फिर संगतों ने कई स्थानों पर विश्राम किया। काफी सारी संगत तथा जत्थे बंगला साहिब ही रहे। समूह संगतें जो बहुत दूर से सन्त महाराज जी को विदा करने पहुँची, जत्थे के सिंघ पुराने ही थे, केवल दो सज्जन गिआनी करम सिंघ की जगह पर भाई वीर सिंघ तथा गिआनी मोहन सिंघ आज़ाद लिये गये थे।

सन्त जी महाराज 6 बजे ही कोठी से अड्डे पर पहुँच गये। कई प्रेमी तरसते थे कि महापुरुष कोई सन्देश तथा सान्तवना ही बख्श दें। सो अड्डे पर कुर्सी लगा दी गई और हजारों ही दीवाने, आप जी के दीदार की रींझ पूरी करने हित, आपजी के दर्शन में नेत्र टिका कर बैठे रहे। इस प्रकार

वचन सुनते हुये, मन को तसल्ली देते हुए, दर्द, विरह तथा फिर बिछोड़े की पीड़ा को अन्दर लेकर ही अनुभव कर सकते हैं, जैसा किसी समय जेल में लिखा गया था -

याद आईआं उर भरीआं अखीआं
छल छल करदे नैन कटोरे।
जिवें शाम नूँ सागर पाणी
सूरज किरनां सुरखी डोरे।
पी चुप चाप किसे पला फड़िआ
उभे साह लै भरे हटकोरे।
पी जाणा जिउं उमडदा सागर
बिन कीते कोई गिले निहोरे।
सीने मूल कलेजे मुकीआं
मैं लै बैठा घुट के दिल नूँ।
शाला उह फिर जीवण किकुण
जिन्हां प्रीतम प्रदेसी तोरे।

आखिर कागज़ पत्र चैक हुए, फिर सामान अन्दर पहुँच गया। संगतें बाहर बरामदे से ही खड़ी देखती रह गईं। जब उनका एक मात्र, आत्म सहारा देखते ही देखते, आंखों से ओझल हो गया।

जहाज दुबई, कुवैत होता हुआ अन्त में ईथर ऐयरपोर्ट इगलैण्ड पहुँच गया। इस बार पहले की अपेक्षा बात ही कुछ और थी। कुछ कट्टरवादियों ने मन में नम्रता, कुछ नास्तिकता में भूचाल, कुछ घोन मोन लड़कों के अन्दर परिवर्तन, अब सन्त महाराज जी के रूझान में आई तबदीली का प्रभाव, अड्डे पर ही दिखाई देता था। प्रत्येक घोन मोन जो भी दिखाई देता था, वह दस्तार जरूर बान्ध कर पहुँचा था। जो उसकी मनोवृत्ति के बदलने की निशानी थी। इस प्रकार हजारों लोग दीदार करने के लिये पहुँचे।

सन्त महाराज ने केवल एक ही दिन आराम करने के बाद साऊथ हाल में दीवान सजाने शुरू कर दिये। साऊथ हाल जो इंगलैण्ड में रहने वाले सिखों का केन्द्र है, वहाँ हर राजनैतिक, धार्मिक तथा भाईचारे की समस्या हल करने के लिये इकट्ठे होते हैं, विचार विमर्श होता है, प्रतिनिधि भेजे जाते हैं। पंजाब के मुख्य प्रयोजक इकट्ठ जैसे पहले पंजाबी सूबा, वर्ल्ड सिख कनवैन्शन तथा गुरू नानक, गुरू गोबिन्द सिंघ जी महाराज के पास सौ साला तथा तीन सौ साला जन्म दिन अथवा गुरू तेग बहादुर साहिब का तीन सौवां वार्षिक शहीदी दिन जो विलक्षण शान रखता था। उसके पश्चात अमृत शहर का बुनियादी दिवस तथा अब गुरू अमरदास जी का पाँच सौवां जन्म दिन, गोइन्दवाल में मनाये जाने वाला महान दिवस पर्व महान पंथक समूह बाहर का प्रतिनिधित्व केवल मात्र साऊथहाल सिंघ सभा ही करती है क्योंकि विलायत की यह सबसे मालदार सभा है और राजनैतिक तौर पर संगठित सभा है। इसलिये इस सभा से जो भी मान किसी को प्राप्त हों, उसमें सारे ही इंगलैण्ड का मूल समझना चाहिए।

एक बार एक बड़े सिख नेता जो इंगलैण्ड से आये थे ने इस पुस्तक के रचयिता को कहा था, ''जो साऊथहाल भूखा वह सभी विलायतों घूथा'' उसका भाव था कि राजनैतिक और धार्मिक दुकानदारी की जो भी वर्षा तथा माया की भेंट साऊथहाल हो सकती है और कहीं नहीं हो सकती? वही सिंघ सभा सन्त ईश़र सिंघ जी महाराज को अपने जाल के अन्दर नहीं फसा सके थे। इसलिये उनके त्याग, तप तथा साधन की महानता की कहानियाँ जो चारों तरफ फैल ही जानी थी। सो इस बार सिंघ सभा के दीवानों की संख्या हद से भी ऊपर चली गई थी। सिंघ सभा तथा उसके चौतरफे मनुष्यों के इकट्ठ ही इकट्ठ दिखाई दिया करते थे।

सन्त महाराज जी की रिहायश सरदार प्रीतम सिंघ इयाली के घर में रखी हुई थी, जो सन्त महाराज के बचपन से ही सेवक थे तथा हर प्रकार उनकी सहायता तथा कृपा के पात्र हैं। 17.7.75 को महाराज जी वाटर ब्रिज देखने गये। सारा ही जत्था तथा अन्य कई गुरमुख भी साथ थे। सन्त जी महाराज ताज की ओर देखते रहे। एक प्रेमी ने पूछा, तब घबराकर एकदम फरमाया, ''यह कभी किसी समय हमारे राज्य की सम्पति थी। मक्कार अंग्रेज ने वह कोहेनूर हीरा जो महाराजा के सिर पर रखा जाता था, केवल खास अवसरों पर ही दरबार में दिखाई देता था, महाराज दलीप सिंघ से धोखे से ले लिया। अब शायद यह दोबारा मेरे देश की धरोहर बन सके।'' यह प्रसिद्ध है कि एक अंग्रेज ने महाराजा से इस हीरे का मूल्य पूछा था तब महाराज ने कहा था, ''श्री मान जी इसकी कीमत जूती या ताकत है जिसके हाथ में हो, यह उसके पास रहेगा।'' शायद यही कारण है कि अग्रेजों की शास्त्र नीति ने इसे ताज में मढ़वा दिया, जो कायम है।''

'चलता'

(गिआनी मेहर जी सिंह जी की पुस्तक
नौं रत्न में से धन्यवाद सहित)

स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार
(Inspired Thoughts of Swami Ram)

डा. स्वामी राम जी

अनुवादिका - डा. तेजिन्दर मल्होत्रा

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक जनवरी, पृष्ठ - 62)

निजत्व

जब आप आत्म साक्षात्कार शुरू करते हो तो सबसे पहले आप अपने शरीर के प्रति सचेत होते हो। जब आप इस बात के बारे में सचेत होते हो कि आपको एक हृष्ट-पुष्ट शरीर की आवश्यकता है तो फिर आप अच्छी खुराक लेते हो और कोई न कोई कसरत शुरू करते हो। तुम्हें यह भी समझने की जरूरत है कि तुम्हारे शरीर के अन्दर प्रत्येक समय विषैलापन उत्पन्न होता रहता है। जो इस विषैलेपन से मुक्त होना जानते हैं वे हैं - योगीजन। योगी वास्तव में मन तथा शरीर के सम्बन्ध को जानते हैं, समझते हैं। वे मन व शरीर के अन्दर की ग्रन्थियों के सम्बन्ध को भी अच्छी तरह से समझते हैं, जानते हैं। उस चीज को अच्छी तरह से समझते हैं, जिसमें शरीर के कण रहते हैं, कार्य करते हैं।

जब तुम मन व शरीर के सम्बन्ध को देखते हो तथा जानने की कोशिश करते हो तो तुम्हें इस बात की समझ पड़ जाती है कि मनुष्यों को अपने अन्दर से ही प्रेरणा मिलती है। केवल तुम्हारे अन्दर ही यह शक्ति है कि तुम शरीर के नियम व उसकी खींच के लिए खड़े हो सको। तुम्हारी हड्डियाँ व तुम्हारी हड्डियों के जोड़ तुम्हें खड़े होने में सहायक होते हैं और वे तुम्हारे शरीर की खींच को देखते हैं। जब तुम शरीर के बारे में अधिक से अधिक जानने लग पड़ते हो तो फिर तुम आरामदायक बैठने का तरीका भी ढूँढ़ लेते हो, तुम्हें तीन महीने तक बैठने का अभ्यास करना चाहिए। सीधे स्थिर होकर आराम से बैठने का अभ्यास व शान्त होकर चुप बैठने का अभ्यास करो। यह आवश्यक नहीं है कि तुम चौकड़ी मार कर बैठो। तुम यह भी देखो कि कौन सा तरीका तुम्हारे लिए आरामदेह है। यदि तुम चौकडी़ मार कर नहीं बैठ सकते हो तो फिर तुम कुर्सी पर भी बैठ सकते हो।

सीधे स्थिर होकर आरामपूर्वक बैठने से तुम अपने श्वासों के प्रति सचेत होते हो। श्वास हमारे मन व शरीर का सेतु हैं। डाक्टरों की खोज यह बतलाती है कि बहुत सारी बीमारियाँ मनोशारीरिक हैं। शरीर तथा मन का सम्बन्ध ही मनो शारीरिक रोग देता है लेकिन मन व शरीर का सम्बन्ध है क्या? क्या ऐसी कोई पुस्तक है जो कि मन व शरीर के सम्बन्ध को बतलाती है? दरअस्ल इस प्रकार की कोई पुस्तक है ही नहीं, हमारे मजहब की पुस्तकें या ग्रन्थ भी मनो शारीरिक सम्बन्धों के बारे में नहीं बतलाती हैं। संसार का कोई भी ग्रन्थ या पुस्तक यह नहीं बतलाती है कि मनोशारीरिक सम्बन्ध क्या है और किस प्रकार से मन व शरीर परस्पर जुड़े हुए हैं। जब तुम जीवन के बारे में जानना शुरू करते हो कि जीवन किस प्रकार से है या जीवन के बारे में जानना शुरू करते हो तो तुम देखते हो कि शरीर व मन का सम्बन्ध श्वासों के साथ है। यह जीवन का ऐसा खरड़ा है जिसे कि तुमने स्वयं लिखा है।

तुम श्वास किस प्रकार से लेते हो? श्वास क्या है? दरअस्ल यह एक बहुत ही आश्चर्यजनक विज्ञान है लेकिन विडम्बना यह है कि इस पर अधिक खोज नहीं हुई है। यह तथ्यपरक बात है कि श्वास ही शरीर तथा मन के सम्बन्ध का आधार हैं। वास्तव में दो पहरेदार हैं, एक है श्वासों को अन्दर ले जाना और दूसरा है श्वासों को बाहर निकालना। ये दो पहरेदार, जीवन का पहरा दे रहे हैं। जब तुम सो भी जाते हो तो भी ये पहरेदार अपना कार्य करते रहते हैं। जब तुम इन पहरेदारों को देखना शुरू करते हो, तो तुम देखोगे कि यदि तुम अच्छी तरह से पेट से श्वास नहीं ले रहे हो यानि कि तुम **deep diaphragmatic breath** नहीं कर रहे हो तो इसका तात्पर्य है कि तुम्हारे दिल की मालिश नहीं हो पा रही है यानि कि उसकी पूरी कसरत नहीं हो पा रही है। केवल पेट से श्वास लेने पर ही तुम्हारे दिल की सही कसरत होती है जो कि तुम्हारे सूक्ष्म भागों को, **cells** को, रक्त साफ करके पहुँचाता है। जब तुम जन्म लेते हो तो फिर तुम्हारे अन्दर दस मिलियन से अधिक सेल्स थे, लेकिन जैसे ही बड़े होते जाते हो तो फिर तुम्हारे बहुत सारे सैल्स मरते जाते हैं।

इसी प्रकार से यदि तुम ठीक प्रकार से श्वास नहीं ले रहे हो तो बहुत सारे सेल मृत हो जाते हैं। यदि तुम जीवन के नियम को ठीक प्रकार से समझ लो तो फिर तुम सौ वर्ष से अधिक जी सकते हो। जब तुम पेट से श्वास लेना सीख लेते हो तो उसके बाद तुम गहरे श्वास तथा अन्य बहुत सारी श्वास लेने की विधियों को सीखते हो। अब तो चिकित्सा विज्ञान भी श्वासों की कसरत को जरूरी बताने लग पड़े हैं। अब वे इस बात को बखूबी जान गए हैं कि जो लोग नाड़ी तन्त्र में दोष के कारण बीमार हैं, उनके लिए ठीक प्रकार से दोनों नासिकाओं से श्वास लेना सहायक होगा।

श्वासों के बारे में जान लेने के बाद तुम अपने चेतन मन को समझ सकते हो, जान सकते हो। आज हम अपने मन के बहुत सारे भाग को जानते ही नहीं हैं, हमने उसे सिखाया ही नहीं है। हमारे पास कोई ऐसा तरीका ही नहीं है जिसके द्वारा हम अपने मन को सिखा सकें। हम स्वप्न वाले मन को जानते ही नहीं हैं। हमारी शिक्षा का तरीका हमारे मन के थोड़े से भाग को ही जानता है। सारे मन को जानकर, उसे सिखाने का तो कोई तरीका ही नहीं है। केवल थोड़े से मन को ही सिखाया जा रहा है। लेकिन हम स्वयं को बुद्धिजीवी कह रहे हैं। वास्तविकता तो यह है कि हमने अपने मन के बहुत सारे स्तरों को अभी जाना ही नहीं है।

आन्तरिक यात्रा

जागृत अवस्था में खुश नहीं, स्वप्नावस्था में खुश नहीं, सुप्तावस्था में खुश नहीं। कौन हमें खुश कर सकता है? हम सभी प्रार्थना करते हैं कि हे परमात्मा! मुझे खुश रखना। लेकिन परमात्मा कहता है, ऐ भद्रपुरुष! मैंने वह सब कुछ तो तुम्हें दिया है, जो कुछ तुम्हें चाहिए, लेकिन फिर भी तुम अरदास कर रहे हो? तुम अपनी योग्यताओं को जानो व समझो। मैं तो तुम्हारे अन्दर हूँ लेकिन तुम समझते हो कि मैं कहीं बाहर हूँ या बादलों में हूँ जैसे कि कहा जाता है कि परमात्मा सर्व व्यापक है, सर्वज्ञ है, सर्वज्ञानी है, सर्व समर्थ है। फिर तुम हो कहाँ? तुम रहते कहाँ हो? तुम्हारा स्थान कहाँ पर है? दरअस्ल तुम मेरे अन्दर हो और मैं तुम्हारे अन्दर हूँ।

इस सत्य को धारण करो, यही सच्चाई है। यही सच्चाई तुम्हारे अन्दर है। अतः तुम इस दुविधा से मुक्त हो जाओ। इसी को मृगतृष्णा कहते हैं, वहम कहते हैं। इससे मुक्त होकर ही तुम आन्तरिक यात्रा को आरम्भ कर सकते हो जो कि स्थूल से सूक्ष्म तक और सूक्ष्म से अति सूक्ष्मता तक, मैडिटेशन के माध्यम से जारी रहती है। यह कोई मजहब नहीं है। मजहब तुम्हें बताता है कि क्या करना है और क्या नहीं करना है जबकि मैडिटेशन तुम्हें बताती है कि तुम किस तरह से हो और तुम्हें किस प्रकार से होना है। यदि कोई योगी मैडिटेशन को भी मजहब बनाता है तो यह उसकी समस्या है। योगी लोग जो कुछ भी बतलाते हैं लोग उसी पर मोहर लगा देते हैं और पश्चिमी लोग परेशान हो जाते हैं। मैडिटेशन तो नियमानुसार व वैज्ञानिक विधि से ही सिखानी चाहिए। इस प्रकार से सिखाई गई या की गई मैडिटेशन मनो शारीरिक रोगों के लिए अदभुत रूप से लाभकारी सिद्ध हो सकती है।

अध्यात्मिक बीमारी भी एक बीमारी है। यदि तुम महापुरुषों की जीवनियों का अध्ययन करोगे तो तुम देखोगे कि सब कुछ का त्याग करने के बाद भी उनके कई सूक्ष्म भय विद्यमान थे। जैसे कि उनका एक भय यह था कि वे जो कुछ सीखना चाहते थे या जो कुछ प्राप्त करना चाहते थे, उसे नहीं कर सके। उनके और सत्य के बीच एक सूक्ष्म पर्दा रह गया था जिसे कि वे पार नहीं कर सके। अतः कई प्रकार की अध्यात्मिक समस्याएँ हैं। यदि तुम संसार को त्याग भी देते हो और कहते हो कि मुझे कुछ भी नहीं चाहिए या मुझे किसी भी सांसारिक प्राप्ति की कोई भी आवश्यकता नहीं है तो भी तुम्हें विभिन्न प्रकार की समस्याएँ हो सकती हैं। केवल मैडिटेशन करके ही तुम इन समस्याओं का समाधान कर सकते हो।

हम आराम, शान्ति व खुशी की तलाश कर रहे हैं लेकिन हमारी नींद हमें पूरा आराम नहीं देती है। संसार की कोई भी खुशी हमें पूरी शान्ति या सम्पूर्ण खुशी नहीं दे सकती है। इधर उधर दौड़ना एक दूसरे को परेशान करना, व्यर्थ की व झूठी सलाहें देना एक निरर्थक कार्य है। आज पूरब के लोग, पश्चिम के लोगों की सहायता कर रहे हैं। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाए तो सारा संसार ही एक अस्पताल बना पड़ा है। बीमार लोग ही बीमारों का उपचार कर रहे हैं। हम अभी तक मानवता की समस्याओं का समाधान नहीं कर सके हैं। हमें यह पता ही नहीं है कि हम इस संसार में रहते हुए संसार की सीमाओं से परे कैसे रह सकते हैं? मानवता अपने सांसारिक दायित्वों का निर्वाह करते हुए किस प्रकार से परम शान्त रह सकती है? आज तक कोई भी शिक्षा का ऐसा तरीका नहीं है जो कि इस समस्या का समाधान कर सके।

'चलता'

रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब

(12.00 बजे से 4.00 बजे तक)

पूर्णमाशी - 1 मार्च, दिन वीरवार तथा 31 मार्च, दिन शनिवार।

(रात्रि 12.00 बजे से प्रातः 4.00 बजे तक)

संक्रान्ति - चेति, 14 मार्च, दिन बुद्धवार।

(प्रातः 5.30 बजे से 8.00 बजे तक)

अमृत संचार - महीने के प्रथम रविवार को गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में सुबह 11.00 बजे होता है।

INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in

Website : www.ratwarasahib.org

Instagram : RATWARA SAHIB (https://instagram.com/ratwara.sahib/)

You Tube : https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh

Facebook : https://www.facebook.com/ratwarasahib1

Twitter : https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13

Live Audio Link 1 - https://www.awdio.com/Ratwara Sahib

Live Audio Link 2 - https://mixlr.com/ratwara-sahib

E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900

आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल भेजने के लिए -

VGRMCT / Atam Marg Magajine
S/B A/C No. 12861000000003 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

दसवंद भेजने के लिए -

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
SB A/C No. 12861100000005 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

विदेश (ABROAD)

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
Punjab National Bank SB A/C No. 0779000100179603
RTGS/IFSC Code - PUNB0077900 Branch Code - 077900

यदि चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार **Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901** पर भेजने की कृपा करें। यदि **Online** राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर **SMS** भेजें जी।

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृप्या अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक चैक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAJINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form ✓ ☐ नई सदस्यता ☐ पुनर्नवीनीकरण ☐ आजीवन सदस्यता

within India

Subscription Period	By Ordinary Post/Cheque	By Registered Post/Cheque
1 Year	Rs. 300/320	
3 Year	Rs. 750/770	
5 Year	Rs. 1200/1220	
Life	Rs 3000/3020	

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 $
Europ	50 Euro	500 Euro
Australia	80 Aus $	800 Aus $

जनवरी ☐ फरवरी ☐ मार्च ☐ अप्रैल ☐ मई ☐ जून ☐ जुलाई ☐ अगस्त ☐ सितम्बर ☐ अक्तूबर ☐ नवम्बर ☐ दिसम्बर ☐

नाम/Name पता/Address.....

.....

.....Pin Code..... Phone ..... E-mail :.....

सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)

डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक

दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

डा. का नाम	विशेषज्ञ	दिन
1. डा. जसबीर कौर	जनरल मैडिसन	सोमवार
2. डा. गुरिंदर कौर कंग	एम.डी., (गाइनी)	सोमवार
3. डा. कुलदीप सिंह कंग	एम.डी. (आँखों के विशेषज्ञ)	सोमवार
4. डा. हरबंस सिंह	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	मंगलवार
5. डा. तेजिंदर सिंह	जनरल मैडिसन	मंगलवार
6. जे.पी.आई. अस्पताल मोहाली के डाक्टर	आँखों के विशेषज्ञ	मंगलवार
7. श्री माइकल जी	एक्स-रे विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
8. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	बुद्धवार
9. डा. जे. एस. गुजराल	जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ	बुद्धवार
10. डा. आर. एस. संधू	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	वीरवार
11. डा. संतोष अनेजा	जनरल मैडिसन	वीरवार
12. डा. जसप्रीत सिंह	एम.डी.एस. (दाँतों के विशेषज्ञ)	वीरवार
13. डा. एस. के. बांसल	जनरल मैडिसन	शुक्रवार
14. डा. बरिन्दर सिंह	जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन	शुक्रवार
15. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	रविवार
16. डा. जिंदल	जनरल मैडिसन	रविवार
17. डा. गुरप्रीत कौर गिल	होम्योपैथिक	बुद्धवार

-: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4, किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।

जरूरी सूचना

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

विश्व गुरमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरू ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं -

हिन्दी	
1. सुरति शबद मार्ग	70/-
2. किव कुड़ै तुटै पालि	35/-
3. बात अगंम की - सात भागों में	400/-
4. किव सचिआरा होइए - भाग पहला	35/-
5. किव सचिआरा होइए - भाग दूसरा	65/-
6. किव सचिआरा होइए - भाग तीसरा	100/-
7. होवै आनन्द घणा	30/-
8. बाबाणियाँ कहानियाँ	50/-
9. सुरतिआं उपजै चाउ	40/-
10. सर्व प्रिय गुरू गोबिंद सिंह जी	10/-
11. भक्त प्रहलाद	10/-
12. अमृत फुहार	10/-
13. अगम अगोचर का मार्ग	70/-
14. जपुजी साहिब सटीक	15/-
15. अमर ज्योतियाँ	15/-
16. अमर गाथा	100/-
17. वैशाखी	10/-
18. साजन चले प्यारिआ	10/-
19. अविनाशी ज्योति - भाग 1	90/-
20. रूहानी गुलदस्ता	70/-
21. चउथै पहरि सबाह कै	60/-

English Version	Price
1. Baisakhi	Rs. 5/-
2. How Rend The Veil of Untruth	Rs. 70/-
C. Discourses on the Beyond -1	Rs 50/-
4. Discourses on the Beyond -2	Rs. 50/-
5. Discourses on the Beyond -3	Rs. 50/-
6. Discourses on the Beyond -4	Rs. 60/-
7. Discourses on the Beyond -5	Rs. 60/-
8. The way to the imperceptible	Rs. 80/-
9. The Lights Immortal	Rs. 20/-
10. Transcendental Bliss	Rs. 70/-
11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1)	Rs. 80/-
12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2)	Rs. 80/-
13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3)	Rs. 110/-
14. The Dawn of Khalsa Ideals	Rs. 10/-
15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji	Rs. 5/-
16. Divine Word Contemplation Path	Rs. 150/-
17. The Story of Immortality	Rs. 260/-
18. Why not Contemplate the Lord	Rs. 200/-

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमां करवा कर मोबाइल नं. 9417214391, 9592009106, 9417214379 पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/Atam Marg Magajine, S/B A/C No. 12861000000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**